सत्संग सरोवर
व्याख्याकार :
पं. वेदभूषण
संपादिका
डा. सुजात

ओ३म्

'स्तुता मया वरदा वेद माता'

सत्संग सरोवर

वृहत्

जागरण. सन्ध्या. प्रार्थना. स्वस्ति वाचन. शान्ति करण.
वृहद् यज्ञ तथा विशिष्ट मंत्रों का सरस. सरल भावानुवाद

व्याख्याकार
पं. वेदभूषण

संपादिका
डॉ. सुनीति
एम्. ए. पी-एच्. डी.

क्रान्तिदूत प्रकाशन
4–5–754. वसु निकुंज.
महर्षि दयानन्द मार्ग. हैदराबाद–27.
पिन 500027. दक्षिण भारत
फोन–41112

प्रकाशक–
शशिकान्त आर्य

प्रकाशन–
क्रान्तिदूत प्रकाशन
4–5–754. वसु निकुंज.
हैदराबाद. आन्ध्र प्रदेश

प्रथम संस्करण
चैत्र शुक्ल प्रतिपदा
युगादि–2039

उपहार संस्करण

फोन–41112

प्राप्ति स्थान –
अन्तर्राष्ट्रीय वेद प्रतिष्ठान
4–5–753, सुलतान बाजार
हैदराबाद–27 भारत

मुद्रक :
प्रिंटिंग एण्ड पब्लिसिटि सर्विस
द्वारा सुनील प्रिंटिंग प्रेस.
पुरानापुल, हैदराबाद.

श्रीयुत् स्व. खुमांन चन्द गोयल
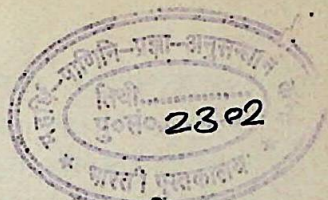
अपनी बात –

मानव जीवन के वे क्षण सबसे अधिक मूल्यवान होते हैं जिन क्षणों में हम उस जगन्नियन्ता प्रभु पिता परमेश्वर का स्मरण करते हैं। संसार के समस्त पदार्थों में सबसे सस्ती सर्वाधिक सुलभ और सरल वस्तु है प्रभु पिता परमेश्वर की भक्ति. स्मरण और उसका ध्यान।

पर आज के दुर्बल निरीह मानव के पास अन्य मनोरंजन आदि के लिए तो पर्याप्त समय होता है पर परमात्मा की भक्ति के लिए वह समय निकाल नहीं पाता। जो समय निकालते हैं दुर्भाग्य से वे परमात्मा के स्वरूप व उसकी उपासना की विधि को नहीं जानते।

परमात्मा की उपासना के तीन प्रकार आज विश्व में प्रचलित हैं–एक है मूर्ति पूजा. दूसरा है शब्द पूजा और तीसरा है ग्रन्थ पूजा।

जैन. बौद्ध और हिन्दू सम्प्रदाय वाले किसी की मूर्ति बना उसे ही परमात्मा या उसके तुल्य मानकर मूर्ति की अर्चना कर लेते हैं। मुसलमान. ईसाई और आर्य समाजी बन्धु. नमाज प्रेयर और वेद मन्त्रों का पाठ मात्र कर अपने कर्तव्य की इति श्री समझ लेते हैं। सिक्ख आदि सम्प्रदाय के लोग ग्रन्थ को ही माथा टेक कर कृतार्थ हो जाते हैं।

परमात्मा की शुद्ध उपासना विधि 'अष्टांग योग' है जो वेद मंत्रों से भी प्रतिपादित है। वेद के मंत्रों पर जब हम अर्थपूर्वक मनन करते हैं तभी वे मन्त्र कहाते हैं। बिना अर्थ जाने मंत्रों का पाठ या जाप केवल ध्वनि मात्र है. जिससे उपासना के इष्ट फल की प्राप्ति संभव नहीं।

वेद मंत्रों को अर्थपूर्वक मनन व तदनुसार आचरण से उपासना फल की प्राप्ति हो जाती है। परमात्मा की प्रार्थना का चरम उद्देश्य है मोक्ष की प्राप्ति. जन्म मरण के बंधन से मुक्त होना। आज के व्यक्ति के लिए यह कितने दुर्भाग्य की बात है कि– वास्तविक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उसके पास समय का अभाव है. किन्तु सांसारिक नाशवान. भौतिक पदार्थों व ऐश्वर्य को बटोरने के लिए ही उसके पास समय है। इस भूल को वह तब अनुभव करता है जब आवश्यकता से भी अधिक बटोर कर उसकी तृष्णा तृप्त नहीं हो पाती। इस भागदौड़ में ही उसका जीवन-रथ किनारे लग जाता है। तब अंतिम क्षणों में वह अनुभव करता है कि-मैंने अनमोल जीवन को मिट्टी बटोरने में ही खो दिया किन्तु.– 'तब पछताए क्या होत है ? जब चिड़िया ने चुग खेत लिया' अतः हम अमीर. गरीब तथाकथित हिन्दू हो या मुसलमान प्रत्येक मनुष्य से बहुत ही स्नेह भाव से कहना चाहते हैं कि–प्रतिदिन हृदय रूपी मन्दिर. मस्जिद या चर्च में एकाग्र चित्त होकर उस परमात्मा का ध्यान करें। आत्म निरीक्षण करें और जन्म और मरण के चक्र से मुक्त होने की कामना करें। काम. क्रोध. लोभ. मोह. भय ईर्ष्या. द्वेष. घृणा आदि से दूर मानवमात्र के कल्याण की कामना करें और अपनी आत्मा को शुद्ध और पवित्र बनाते चले जाएँ। मनुष्य अच्छे कर्म और परोपकार के द्वारा उत्तम जन्म व सुख प्राप्त कर सकता है. पर जब तक मनुष्य के हृदय में प्रभु प्राप्ति की ललक नहीं जगती और वह परमात्मा की उपासना द्वारा मोक्ष की कामना नहीं करता तब तक वह जन्म मरण के चक्र से छूट नहीं सकता।

इसीलिए वैदिक उपासना पद्धति का विधान किया गया है। जिस प्रकार नन्हा बालक अपनी माँ की गोद में बैठकर प्यार भरी बातें करता है. वैसे ही हमें प्रतिदिन कुछ समय एकान्त शान्त वातावरण में एकाग्र चित्त होकर हृदय मंदिर में प्रभु का ध्यान करना चाहिए. जैसे हम उस सर्व शक्तिमान पिता की प्यार भरी गोद में बैठकर वार्तालाप कर रहे हैं।

चुन चुन कर अपने दोषों का परित्याग करना और संकल्पपूर्वक सद्गुणों को धारण करते चले जाना उपासना का प्रत्यक्ष फल है।

जिस प्रकार अग्नि शिखा ऊपर की ओर और जल धारा नीचे समुद्र की ओर खींची चली जाती है—वैसे ही आत्मा के भीतर परमात्मा को प्राप्त करने की सहज प्रवृत्ति पायी जाती है। एक न एक दिन ठोकरें खा खाकर अन्ततः आत्मा परमात्मा की ओर प्रवृत्त हो जाता है। यही जीवन की सिद्धि है।

प्रस्तुत सत्संग सरोवर के निर्माण की मूल भावना विश्व मानव को परमात्मा की ओर प्रवृत्त करना मात्र है।

भारत के सुप्रसिद्ध ट्रान्सपोर्ट प्रतिष्ठान साउथ ईस्टर्न रोडवेज के गोयल परिवार की अन्तः कामना से प्रेरित होकर तथा उनके स्नेहपूर्ण आर्थिक सहयोग से ही हम इस 'सत्संग सरोवर' का प्रकाशन कर सके हैं. अतः इस धार्मिक विराट् आर्य परिवार के लिए उत्तम सुख. स्वास्थ्य और दीर्घायु की कामना करते हैं।

यदि एक भी व्यक्ति इस पुस्तक से प्रेरणा प्राप्त कर प्रभु भक्ति की ओर अग्रसर होगा तो हम अपने इस प्रयत्न को सफल मानेंगे।

'सत्संग सरोवर' एक जीवन पाथेय है। यह एक आध्यात्म प्रसाद है. जिससे मानव-जीवन की अध्यात्म यात्रा सुखदायक हो सकती है. इन्हीं शुभ कामनाओं के साथ—

विनीत

वेदभूषण

वेद ज्ञान का अनन्त विस्तार है. उसके एक एक शब्द में अनन्त भाव छिपे होते हैं। यह व्याख्या एक तुच्छ. अल्पज्ञ व्यक्ति की है अतः इसमें दोष संभाव्य हैं. इस संभावना के लिए विवेकी जनों से विनम्रता पूर्वक क्षमा की याचना है।

सत्संग निर्देश और विधि –

१. आर्य समाज भवन. किसी मन्दिर. मस्जिद. चर्च. गुरुद्वारा या किसी सार्वजनिक स्थान उपासनागृह अथवा किसी परिवार में. स्थान की शुद्धि कर. उत्तम आसन आदि विछाकर यज्ञ व सत्संग की व्यवस्था करें।

२. प्रति सप्ताह जहाँ कहीं सत्संग हो उसमें हर वार एक नये यजमान दम्पति को यज्ञ पर विठावें. यज्ञ सामग्री व यज्ञशेष [प्रसाद] दक्षिणा आदि का व्यय यजमान करें।

३. यजमान दम्पति को संकेत कर दिया जाए कि—वह पूर्व रात में सर्वथा संयम से रहें और ओ३म् नाम का जाप करते रहें। सोने से पूर्व भी और उठने पर भी कम से कम पन्द्रह मिनट जाप अवश्य करें।

४. यजमान को यज्ञ के उपरान्त सब आशीर्वाद दें. आशीर्वाद वृहत् यज्ञ के अन्त में छाप दिया गया है।

५. कम से कम पाव भर शुद्ध घी. आधा किलो सामग्री. दो टिक्की कर्पूर. सूखी आधी वट्टी खोपरा [जिसमें कर्पूर रख यज्ञ कुण्ड में यजमान द्वारा अग्न्याधान कराया जाए] चन्दन की छः समिधा. एक पैकेट अगरवत्ती. केसर एक पैकेट [घृत में मिलाने] थोड़ा सा भात या शक्कर. [स्विष्टकृत आहुति के लिए] ताजे फूल की पंखुड़ियाँ या अक्षत् के चावल [आशीर्वाद देने] और दो यज्ञोपवीत जो यज्ञ से पूर्व यजमान दम्पति को न हो तो पहना दें और यज्ञ के लिए अच्छी समिधा [लकड़ी] उक्त सामान यजमान से मंगवा लें।

६. पाँच आचमन पात्र व चमचे. जल के लिए एक लोटा. घी के लिए एक छोटा भगोना व वड़ा चमचा. सामग्री के लिए दो थाली. स्विष्टकृत के लिए एक कटोरी. फूल या अक्षत् के लिए एक थाली. उक्त पात्रों की व्यवस्था पहले ही कर लें।

७. लाउड स्पीकर की स्थायी व्यवस्था सत्संग के लिए अवश्य होनी चाहिए। जिससे आस पास का वातावरण गूँजता रहे। श्री. के. एल. वर्मा. सुधा संगीत. पोस्ट बॉक्स १४९. अजमेर. के पते से उत्तम रेकार्ड मंगाकर बजावें।

८. सर्व प्रथम यजमान दम्पति [पुरुष और स्त्री दोनों] को यज्ञोपवीत न हो तो धारण करावें और फिर उनसे अर्थ सहित गायत्री मंत्र बुलवा दें और फिर सन्ध्या के मंत्रों का पाठ सम्मिलित रूप से करें। तत्पश्चात् स्तुति. प्रार्थना. उपासना के आठ मंत्रों का पाठ अर्थ सहित करें जो ऋषि दयानन्द कृत संस्कार विधि के प्रारंभ में हैं। उन्हें एक व्यक्ति पढ़े और सब ध्यान पूर्वक सुनें या फिर हमारे द्वारा प्रकाशित वैदिक सान्ध्य गीत का मंत्र के साथ सामूहिक गान करें। पश्चात् स्वस्तिवाचन व शान्तिकरण तथा वृहद् यज्ञ। तदुपरान्त सन्ध्या. स्वस्ति वाचन. शान्तिकरण व यज्ञ के पद्यानुवाद में से किसी एक का सम्मिलित गान करें। तदनन्तर वैदिक विनय. प्रार्थना सुमन या वैदिक सुरभि. सत्संग सरोवर में से किसी एक मंत्र द्वारा अर्थ सहित कोई एक व्यक्ति प्रार्थना करे। तत्पश्चात् प्रभु भक्ति के भजन. वेदोपदेश. सत्यार्थप्रकाश की कथा या किसी आदर्श महापुरुष के जीवन चरित्र का पाठ हो। अन्त में यजमान को आशीर्वाद. आगामी कार्यक्रम की सूचना पश्चात् शान्ति पाठ के साथ कार्यक्रम समाप्त हो। इस प्रकार सम्पूर्ण कार्यक्रम दो घंटे में समाप्त होना चाहिए। यज्ञ से पूर्व स्वस्ति वाचन व शान्ति करण में से किसी एक का क्रमशः पाठ किया जाना चाहिए।

९. सत्संग में किसी की निन्दा. आलोचना. राजनीतिक चर्चा. राग. द्वेष की बातों पर सर्वथा प्रतिवन्ध रहे। सारा कार्यक्रम विशुद्ध आध्यात्मिक ही होना चाहिए। प्रवचन भी मण्डनात्मक हों खण्डनात्मक नहीं।

१०. यदि आर्य समाज में प्रातः सत्संग होता हो तो सायंकाल किसी एक परिवार में पारिवारिक सत्संग का आयोजन भी करें। यजमान को विठाने की पद्धति दोनों सत्संगों में चलाई जानी चाहिए। आज की परिस्थिति में पारिवारिक सत्संग अधिक उपादेय सिद्ध होंगे। हर व्यक्ति अपने घर में यज्ञ कराना पसन्द करेगा. चाहे वह आर्य हो या न हो। किन्तु ध्यान रहे कि आर्य समाज के भी सत्संग अवश्य होने ही चाहिएँ।

११. प्रत्येक मंत्र के वाद एक विद्वान सत्संग सरोवर में से उस-उस मंत्र का अर्थ भी पढ़ता जाय और सब श्रवण करें तो इससे यज्ञ में आकर्षण पैदा हो जाएगा। समयानुसार कार्य करें।

१२. विद्वान. पुरोहित अथवा ब्राह्मण को यथा सामर्थ्य अधिक से अधिक दक्षिणा दें व उसका पूर्ण आदर करें। कम से कम आधा ग्राम स्वर्ण मूल्य के वरावर दक्षिणा एक वार के यज्ञ के लिए श्रद्धापूर्वक प्रदान करें।

—संपादक

ओ३म् । आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम् । आराष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम् । दोग्ध्री धेनुर्, वोढाऽनड्वान्, आशुः सप्तिः, पुरन्धिर्योषा, जिष्णू रथेष्ठा सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम् । निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु, फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्ताम् योगक्षेमो नः कल्पताम् ।

यजु० २२। २२

हे सकल ज्ञान के प्रकाशक, ब्रह्माण्ड के रचयिता, ब्रह्म स्वरूप प्रभो ! मेरे राष्ट्र में अर्थात् संपूर्ण विश्व में ज्ञान का प्रचार करने व दान करने वाले ज्ञानी गण, ब्रह्म तेज को धारण किए हुए हों। परम तेजस्वी हों । राष्ट्र की रक्षा करने वाले सैनिक शूरवीर, दुश्मन का मान मर्दन करने वाले, शस्त्रास्त्र विद्या में अत्यन्त निपुण व न्याय की रक्षा करने वाले हों । आप ऐसे महाबलिष्ठ महारथियों को जन्म दीजिए ।

अमृत समान दूध देने वाली दुधारु गाएँ तथा भार ढोने वाले सशक्त बैल व उत्तम वाहन, तीव्र वेग से भागने वाले यान तथा अश्व तथा उत्तम स्वभाव वाली सुशील बुद्धिमती नारी तथा अन्यायियों पर विजय की कामना करने वाले वीरों से धरती सदा भरपूर रहे ।

राष्ट्र का संचालन करने वाली संसदों व विधान सभाओं में युवा शक्ति का प्राचुर्य हो । हमारे नागरिक श्रेष्ठ कर्मों में

प्रवृत्त तथा वातावरण प्रदूषण को नष्ट करने के लिए सदा यज्ञ करने वाले. यज्ञ प्रेमी हों और वीर हों।

जव जव प्रजा कामना करे तव तव मेघ जल वरसाएं. उत्तम अन्न. धन धान्य. उत्तम वनस्पतियों तथा फल. फूल से धरती समृद्ध रहे।

सारी प्रजा उत्तम सुख और हार्दिक आनन्द व शान्ति से परिपूर्ण रहे।

यज्ञोपवीत मन्त्र -

ओ३म्। यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुर-स्तात्। आयुष्यं अग्र्यं. प्रतिमुंच शुभ्रं. यज्ञोपवीतं बल-मस्तुतेजः। ओ३म् यज्ञोपवितमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञो-पव तेनोपनह्यामि।

—आर्ष वचन

यो यज्ञस्य प्रसाधनः। तन्तुर् देवेषु आततः। तं आहुतं नशीमहि।

ऋक्० १०।५७।२

हे अपने अनुशासन में बाँधने वाले दिव्य प्रभो ! यज्ञ रूप श्रेष्ठ कर्मों की ओर प्रवृत्त करने वाला यह यज्ञोपवीत अन्यन्त पवित्रता का प्रेरक है। जो हमें उत्तम व्रतों के द्वारा सरलता से ईश्वर प्राप्ति का कारण है और जो सरलता से हमें प्रगति व उन्नति के मार्ग पर ले जाता है। जिन व्रतों कें धारण करने से हमारी आयु बढ़तो है। हम उत्साह पूर्वक प्रगति के मार्ग पर आगे वढ़ते हैं। जो हमें दोषों से मुक्त निर्भीक व पवित्र वनने की प्रेरणा देता है ऐसा यज्ञोपवीत हमें उत्तम व्रतों से

परम बलवान व तेजयुक्त बना दे। इसी लिए मैं इसे धारण करता हूँ।

जो यज्ञ रूप श्रेष्ठतम कर्मों को उत्तम रीति से धारण करने की प्रेरणा देता है। जिन उत्तम व्रतों के धारण करने से यज्ञ की सिद्धि व सफलता होती है। जो तन्तु रूप सूत्र हममें दिव्य गुणों का विस्तार करता है। चारों ओर से उत्तम गुणों को धारण कराने हारे उत्तम प्रेरणा प्राप्त करने हेतु हम इस यज्ञ सूत्र को धारण करें।

भोजन के समय पढ़ने का मन्त्र –

ओ३म् । अन्नपतेऽन्नस्य नो देहि. अनमीवस्य शुष्मिणः । प्र प्र दातारं तारिष. ऊर्ज्जं नो धेहि. द्विपदे चतुष्पदे ।

–यजु० ११।८३

हे समस्त भोग्य पदार्थों के स्वामी परमेश्वर आप कृपा कर हमें सदा उत्तम पुष्टिकारक, बल वर्धक. उत्तम अन्नादि पदार्थ प्रदान कीजिए। हे पिता हमारे सेवनीय अन्न रोग के कीटाणुओं से सर्वथा रहित और अत्यन्त बलदायक हों। हे मेरे पिता जो भी सज्जन अन्नादि भोग्य पदार्थों का दान करते हैं उन्हें आप सदा दुखादि से रहित कीजिए और उन्हें उत्तम सुख प्रदान कीजिए। हमारे द्वारा खाया जाने वाला अन्न हममें उत्तम बल और ओज को धारण कराने वाला हो। हे दीनानाथ प्रभो ! आप दो पैर वाले और चार पैर वाले अर्थात् प्राणी मात्र के लिए उत्तम भोज्य पदार्थ प्रदान कीजिए।

प्रातः काल उठते ही प्रार्थना करने के मन्त्र –

ओ३म् । प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे, प्रातर्मित्रा वरुणा प्रातरश्विना । प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हुवेम । यजु० ३४।३४

हे नाना गुणों से युक्त अग्निरूप प्रभो ! प्रात.काल की इस पवित्र वेला में मैं आपके अग्नि स्वरूप का स्मरण करता हूँ । आप मुझे भौतिक अग्नि के सुखों से तथा सूक्ष्म रूप ज्ञान रूप अग्नि से देदीप्यमान कर दीजिए । ऐश्वर्यों के स्वामी प्रभो ! मैं इन्द्र रूप में वायु के तुल्य आपके गुणों का स्तवन करता हूँ । मैं वायु के रहस्यों को जानकर नाना प्रकार के सुखों से परिपूर्ण हो जाऊँ । वायु तुल्य मेरे कर्म सदा उत्तम मार्ग का अनुसरण करने वाले हों । मैं आपके उत्तम ज्ञान और श्रेष्ठतम कर्मों का स्मरण कर आपका आह्वान कर रहा हूँ ।

हे दीनानाथ ! मैं मित्र और वरुण रूप प्राण और उदान रूप शक्ति का स्वामी बनूँ । हे देव ! अश्वि रूप जितने भी युग्म और जोडे हैं जो मिलकर हमारे लिए सुखकारी होते हैं ऐसे सूर्य और चन्द्रमा के समान युगल शक्तियों को प्राप्त कर सकूँ । हे देव ! आपकी अनुकम्पा से मैं ब्राह्म मुहूर्त्त की पावन वेला में आपकें द्वारा धरती पर विखेरे गए ऐश्वर्यों का स्मरण कर उनकी कामना करता रहूँ । हे पोषणकर्ता देव ! मैं आपके

द्वारा वनाए गए भोग्य पदार्थों का सेवन कर उत्तम पुष्टि को प्राप्त करूँ। हे ज्ञान के स्वामी! वेद ज्ञान के देने वाले प्रभो! आप मुझे उत्तम ज्ञान प्रदान कीजिए जिससे मैं ज्ञान पूर्वक उत्तम सुखकारी पदार्थों का ही सेवन करूँ। हे पिता! प्रातः काल की इस पवित्र वेला में शान्ति रूप आपके सोम स्वरूप का मैं स्मरण करता हूँ जिससे मैं भी सौम्य बन जाऊँ। हे देव! मैं जानता हूँ कि – जब जब मैं आपकी प्रेरणाओं की उपेक्षा करता हूँ तब तब आप रुद्र रूप में मुझे रुलाते हो। आपके इसी रुद्र रूप का स्मरण कर मैं सदा बुराइयों से बचता रहूँ और सुपथ पर निरन्तर बढ़ता जाऊँ।

प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम. वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता। आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा. चिद्यं भगं भक्षीत्याह।

– यजु० ३४।३५

हे अनुशासन प्रिय जयशील प्रभो! प्रातःकाल की इस पावन वेला में मैं आपके उत्कृष्ट सेवन करने योग्य ऐश्वर्य का स्मरण करता हूँ। मेरे पिता! उत्कृष्ट साधनों से ही मैं आपके उत्कृष्ट ऐश्वर्य को प्राप्त करूँ। इसीलिए इस एकान्त शान्त वातावरण में मैं आपको बुला रहा हूँ। क्यों कि-.आप ही अपने भक्तों को उत्तम सिद्धि. सफलता और विजय के देने वारे हो।

हे अदिति रूप पिता! मैं सदा आपका पुत्र हूँ। मुझे आत्मा रूप पुत्र को आप निरन्तर पिता के रूप में विशेष रूप से धारण किए रहते हो।

हे अत्यन्त सन्माननीय पिता ! आप मुझ चारों ओर से धारण किए हुए हो। जैसे पिता पुत्र को अपनी गोद में भर लेता है। वैसे ही सदा आप मुझे धारण किए रहते हो। हे देव मैं अपने परम पुरुषार्थ से बहुत शीघ्र आपको पा सकूँ। आप मेरे हृदय में प्रकाशित हूजिए। जिससे मैं आपके प्राप्ति रूप-उत्तम आनन्द का उप भोग कर सकूँ अर्थात् मोक्ष मार्ग का पथिक बन सकूँ।

भग प्रणेतर्भग सत्यराधो. भगेमां धियमुदवा ददन्नः। भग प्रणो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभि-र्नृवन्तः स्याम।

—यजु० ३४।३६

हे परम ऐश्वर्य के स्वामी प्रभो ! आप ही नाना प्रकार के उत्तम ऐश्वर्यों के देने हारे प्रणेता हो। आप हमें उत्तम पुरुषार्थ से सत्याचरण द्वारा उत्तम ऐश्वर्य. धन व संपत्ति प्राप्त करने का सामर्थ्य प्रदान कीजिए। अनुचित प्रकार से धन अर्जित करने वाली दुर्बुद्धि मुझ में कभी न आए। हे पिता ! मैं सत्य व्यव-हार द्वारा उत्तम ऐश्वर्य को प्राप्त कर सकूँ ऐसी उत्तम बुद्धि आप मुझे निरन्तर देते रहिए।

हे अनन्त एश्वर्यों के स्वामी देव ! उत्तम भोग्य. सेवनीय पदार्थों की प्राप्ति के लिए आप हमें उत्तम वाणी तथा उत्तम गौएँ प्रदान कीजिए जिससे हम उत्तम खाद्य प्राप्त कर सकें। हे पिता ! इसके साथ-साथ आप हमें उत्तम यातायात के साधन भी प्रदान कीजिए।

हे देव ! आपकी अनुकम्पा से मैं सदा धर्मात्मा. सदाचारी. पुरुषार्थी. विद्वान्. ज्ञानी जनों के सत्संग में रहूँ जिससे मैं मनुष्यों में श्रेष्ठ वन सकूँ ।

उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम् । उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य. वयं देवानां सुमतौ स्याम । – यजु० ३४।३७

हे मेरे प्यारे पिता ! आपके उत्तम ऐश्वर्य का ध्यान कर मैं भी अव ऐश्वर्यवान् बन जाऊँ । हे देव ! मैं आपके निकट आकर अपने को ऐश्वर्यशाली अनुभव करता हूँ । जिस प्रकार अब मैं हृदय से आपका ध्यान कर रहा हूँ. उसी प्रकार दिन भर मैं आपको प्रत्यक्ष जानकर ही कर्म करने में प्रवृत्त रहूँ । कभी आपको विसराऊँ नहीं । जिस प्रकार यह उदित हुवा सूर्य ऐश्वर्य को विखेरता है वैसे ही मैं भी दिव्य गुणों से युक्त उत्तम सद्बुद्धि को प्राप्त कर निरन्तर संसार में उत्तम प्रेरणा रूप सुमति को प्राप्त कर उसे विखेरता रहूँ ।

भग एव भगवां अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तःस्याम तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भगःपुर एता भवेह । ओ३म् शान्तिश्शान्तिश्शान्तिः । – यजु० ३४।३८

हे परम प्रिय ऐश्वर्य युक्त भगवन् ! आपके इस समस्त ऐश्वर्य का स्वामी मैं ही तो हूँ । कब ? जब मैं आपके ही समीप रहूँगा तब मैं भी ऐश्वर्यशाली कहाऊँगा ।

इसीलिए हे ऐश्वर्यशाली प्रभो ! मैं सवविध आपको पुकारता हूँ । क्यों कि आपको पा लेने से मैं सब कुछ पा लूँगा। आपका समग्र ऐश्वर्य मेरे सामने बिखरा होगा। इसलिए मैं तो ऐश्वर्य के पीछे नहीं ऐश्वर्य पति के पीछे चलना चाहता हूँ ।

मैं ने ऐश्वर्य को पा लेने का उपाय खोज लिया है । अत: अब आप मुझे कभी अपने से दूर न कीजिए । मैं कभी कोई ऐसा कार्य नहीं करूँगा जिससे मैं आप से दूर हो जाऊँ। हे देव ! आप हमारे पथ प्रदर्शक बन कर हमें इस ब्रह्माण्ड के ऐश्वर्य का स्वामी बना दीजिए ।

प्रातः काल की इस पवित्र. शान्त वेला में मैं यही प्रार्थना लेकर आया हूँ । मेरे पिता. मेरी प्रार्थना स्वीकार कीजिए ।

—इति सुप्रभातम्

सदा स्त्री पुरुष रात्रि के दस बजे शयन और रात्रि के पिछले प्रहर वा चार बजे उठ के प्रथम हृदय में परमेश्वर का चिन्तन करके धर्म और अर्थ का विचार किया करें और धर्म और अर्थ के अनुष्ठान वा उद्योग करने में यदि कभी पीड़ा भी हो तथापि धर्म युक्त पुरुषार्थ को कभी न छोड़ें किन्तु सदा शरीर और आत्मा की रक्षा के लिए युक्त आहार. विहार औषध सेवन. सुपथ्य आदि से निरन्तर उद्योग करके व्यावहारिक और पारमार्थिक कर्तव्य कर्म की सिद्धि के लिए ईश्वर की स्तुति. प्रार्थना और उपासना भी किया करें कि जिस परमेश्वर की कृपा दृष्टि और सहाय से महान् कठिन कार्य भी सुगमता से सिद्ध हो सके।

—महर्षि दयानन्द सरस्वती

सन्ध्योपासना योग –

आत्मा और परमात्मा के मिलन का मुख्य साधन शुद्ध योग विद्या है। महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका नामक ग्रन्थ में योग को उपासना योग लिखा है। इससे स्पष्ट है कि – योग और उपासना पर्यायवाची शब्द हैं।

महर्षि दयानन्द सन्ध्या को सन्ध्योपासना लिखते हैं। इस प्रकार वैदिक सन्ध्या को सन्ध्योपासना योग कह सकते हैं।

योग के आधार पर ही वैदिक सन्ध्या के मंत्रों का क्रम से संयोजन होता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने भी सन्ध्या मन्त्रों का विधान इसी आधार पर किया है। यहाँ हम संकेत रूप में मन्त्रों के साथ अष्टांग योग का विनिमय करेंगे। विशेष व्याख्या वैदिक सन्ध्या सौरभ नामक ग्रन्थ में की जाएगी।

अष्टांग योग सोपान –

१. यम – अहिंसा. सत्य. अस्तेय. ब्रह्मचर्य. अपरिग्रह. ये पाँच यम कहाते हैं।

२. नियम – शौच. सन्तोष. तप. स्वाध्याय. ईश्वर प्रणिधान. ये पाँच नियम कहाते हैं।

३. आसन – समस्त चक्रों को एक ही स्थिति में अवस्थित करना। शारीरिक स्वास्थ्य इसका मुख्य प्रयोजन है।

४. प्राणायाम – श्वास प्रश्वास की ऐसी प्रक्रिया जिससे प्राण बलवान होते हैं और चित्त एकाग्र होता है।

रात और दिन. दिन और रात की सन्धि वेला में जो सम्य ध्यान. शुद्ध एकान्त देश में [यदि नदी अथवा तालाब के तट पर बैठ की जाए तो सर्वोत्तम] जहाँ का वायु शुद्ध हो कोलाहल शून्य स्था पर बैठ आँखों को बन्द कर. अन्तर्मुखा होकर. मन में मनन पूर्वक. से सन्ध्या करनी योग्य है।

गुरु म

ओ३म् । भूर्भुवःस्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं. भर्गो देवस धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् । यजु० ३६

हे भू तत्व द्वारा प्राणों के देने हारे प्राण दाता प्रभो आप हमारे प्राणों को पुष्ट कीजिए । हे वायु तत्व द्वारा हमा शारीरिक मानसिक तथा बौद्धिक दु:खों के हरनें वाले दु:खह प्रभो ! आप हमारे त्रिविध दु:खों को दूर कर दीजिए । अग्नि तत्व द्वारा नानाविध सुखों के देनेहारे सुख स्वरूप प्रभो

---

५. प्रत्याहार – इन्द्रियों को भोगों से हटाकर सर्वथा उन्नयन प्रवृत्त करना ।

६. धारणा – हृदय में ईश्वर के प्रति अगाध विश्वास ।

७. ध्यान – तन और मन की स्थिति से भी परे आत्मा औ परमात्मा की सान्निध्यता । ईश्वर का ही चिन्त

८ समाधि – जहाँ आत्मा स्वयं को भुलाकर प्रभु में ही विस्म हो जाता है ।

आप हमें सब प्रकार का सुख प्रदान कीजिए। हे प्रभो! हम जानते हैं कि आप ही इस सकल सृष्टि के उत्पादक हो। हमें भी निर्माण करने की क्षमता प्रदान कीजिए। हे प्रभो! आप सर्वश्रेष्ठ. वरणीय हो। हमें भी श्रेष्ठ बनाइए। आप ही शुद्ध स्वरूप हो हमें भी सब विध पवित्र कर दीजिए।

हे शुद्ध. बुद्ध. मुक्त स्वभाव. देव! इन्हीं दिव्यताओं से युक्त आप का हम ध्यान करते हैं। आप के इन त्रिविध गुणों और त्रिविध शक्तियों को धारण करने का हम प्रयत्न करते हैं। शुद्ध अन्त:करण से आप का ही ध्यान करते हैं क्योंकि हे देव! आप ही हमारी बुद्धियों में सतत् शुभ प्रेरणा प्रदान करते हो। हे दीनानाथ! हम आप की अन्त: प्रेरणा को सुनें और तदनुकूल आचरण करें ऐसा सामर्थ्य हमें प्रदान कीजिए।

हमें भू: से स्व: की ओर जाना है यही हमारे जीवन का लक्ष्य है। यही हमारी उपासना का परम उद्देश्य है।

सन्ध्या का फल –

–आचमन मन्त्र

ओ३म्। शं नो देवीरभिष्टय. आपो भवन्तु पीतये।
शंयोरभिस्रवन्तु नः। –यजु० ३६.१२

हे सुख और शान्ति को देने वाली कल्याण मयी माँ! आप दिव्य गुणों से युक्त हो. हमें भी अपनी दिव्यताओं से परिपूर्ण कीजिए। हे इष्ट सुखों को प्रदान करने वाली ममतामयी

माँ ! आप देवी स्वरूपा हो। आप की शक्ति चहुँ दिशा
व्याप्त हो रही है अतः हम पर चारों ओर से सदा सुख औ
आनन्द की वर्षा करती रहो। आप की कृपा से हम उभय वि
अभ्युदय और निश्रेयस् सुख को प्राप्त कर सकें हम सर्व
आनन्दित रहें। हे जगज्जननी! हमारी उपासना का यह दि
फल हमें प्रदान कीजिए।

—इन्द्रिय स्पर्श म

यम - नियम की साधना—

**ओ३म् वाक् वाक्। ओ३म् प्राणः प्राणः। ओ३
चक्षुश्चक्षुः। ओ३म् श्रोत्रं श्रोत्रम्। ओ३म् नाभिः
ओ३म् हृदयम्। ओ३म् कण्ठः। ओ३म् शिरः
ओ३म बाहुभ्यां यशोबलम्। ओ३म् करतल कर
पृष्ठे।**

हे प्रभो ! आप की कृपा व उत्कृष्ट अन्तः प्रेरणा से मे
वाणी सत्य तथा माधुर्य से परिपूर्ण हो। वाणी की समस
दिव्यताएँ मेरी वाक् शक्ति में स्थिर हो जायँ। हे प्रभो ! मे
प्राण बलिष्ठ व गन्ध शक्ति से युक्त हों। मेरी आँखों में ते
व पवित्रता हो। मेरे कान सदा स्वस्थ रहें एवं उत्तम वच
का श्रवण करें। मेरा नाभि चक्र पवित्र रहे। मेरा हृच्च
सदा स्वस्थ व शुद्ध रहे। हे देव ! मेरा कण्ठ स्थित विशुद्ध च
सदा स्वस्थ व पुष्ट होवे। हे मेरे पिता ! मेरे सिर में स्थि

आज्ञा चक्र और सहस्रार चक्र सर्वदा स्वस्थ व पवित्र रहें। हे मेरे सर्वशक्तिमान देव ! मेरी दोनों भुजाओं को वलिष्ठ वना दीजिए। जिस से मैं अत्यन्त पुरुषार्थी हो कर श्रेष्ठ कर्मों के द्वारा उत्तम यश को अर्जित कर सकूँ। हे नाना विध ऐश्वर्यों का दान करने हारे प्रभो ! मेरी हथेली और उस का पृष्ठ भाग सदा पुष्ट और स्वस्थ रहे। इन से मैं सदा परोपकार के श्रेष्ठ-तम कार्य करता रहूँ।

इस मंत्र द्वारा एक एक अंग के लिए जो प्रार्थना हम परमात्मा से कर रहे हैं वह प्रार्थना तभी फलीभूत होगी जव हम अपने एक एक अंग को यम और नियम के द्वारा पुष्ट एवं शुद्ध वना लेंगे। एक एक अंग को यम और नियमों की कसौटी पर कसें और उन्हें यम और नियमों से अनुप्राणित रक्खे। प्रभु से प्रार्थना करते हुए ध्यान रखें कि कि हमें यम और नियमों से ही प्रत्येक अंग के वैशिष्ट्य को धारण कर लेना है। इसी परिप्रेक्ष्य में अंगस्पर्श मंत्रों के अर्थों को जानें।

अंगों को स्वस्थ व बलिष्ठ रखने के उपाय –

मार्जन मन्त्र –

पिण्ड दर्शन –

ओ३म् भूः पुनातु शिरसि। ओ३म् भुवः पुनातु नेत्रयोः। ओ३म् स्वः पुनातु कण्ठे। ओ३म् महः पुनातु हृदये। ओ३म् जनः पुनातु नाभ्याम्। ओ३म् तपः पुनातु पादयोः। ओ३म् सत्यं पुनातु पुनश्शि-रसि। ओ३म् खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र। तैत्ति० १।१७

हे प्राणदाता अग्नि रूप परमेश्वर! मैं अपने भू चक्र [मल विसर्जन संस्थान] के परि शोधन से सिर को स्वस्थ व पवित्र कर लूँ।

हे दुःखहर्ता वायु तुल्य देव ! मैं अपने स्वाधिष्ठान चक्र अर्थात् उपस्थेन्द्रिय के संयम से व परिशोधन से अपने नेत्रों को तेजस्वी. प्रकाशयुक्त. पवित्र एवं सूक्ष्म दर्शी वनाता रहूँ।

हे आनन्दों के देने हारे जलरूप प्रभो ! मैं अपने स्वः रूप मणि चक्र अर्थात् नाभि चक्र के परिशोधन से कण्ठ को स्वस्थ व मधुर वनाता रहूँ।

हे महत्तत्व के धारक प्रभो ! आप अपनी महानता और विशालता को मेरे हृदय में धारण करा दीजिए जिस से भूः भुवः. स्वः रूप मूलाधार. स्वाधिष्ठान व नाभि चक्र के परिशोधन से तथा सत्यं रूप कण्ठ ललाट व सहस्रार चक्र के परिशोधन से मेरा हृच्चक्र सदा स्वस्थ व महान् रहे। मैं अपने हृदय में सदा आप की विद्यमानता का अनुभव करूँ।

हे सकल जगत् के उत्पादक प्रभो ! मैं नाभि से प्रजनन शक्ति को बढाता रहूँ। हे परंतप ! आप हमारे पैरों में सबलता प्रदान कीजिए।

हे मेरे पिता ! सत्य रूप जो आप का ज्ञान है. वेदामृत है उस कें पठन-पाठन से मैं अपने सिर को ज्ञान के प्रकाश से आलोकित कर लूँ। बिना भू रूप सत्य प्रकृति के मैं सत्य ज्ञान को कदापि प्राप्त नही कर सकता। अतः मुझ पर कृपा कीजिए

जिस से मैं शारीरिक स्तर पर सदा स्वस्थ रहूँ और इन्द्रियों में इन्द्र रूप को धारण करता चला जाऊँ।

मार्जन मन्त्र में सप्त चक्रों की शुद्धि तथा उन्हें स्वस्थ बनाए रखने के उपाय वर्णित हैं। हमारे शरीरस्थ अष्ट चक्रों में से मनस् चक्र को छोड़ कर जिस का शोधन मनसा परिक्रमा मन्त्रों द्वारा होगा यहाँ केवल सप्त चक्रों का विधान है। इन चक्रों का मुख्य संचालक हृच्चक्र है जिस में आत्मा का निवास है। यहीं से आत्मा पूरे देह की व्यवस्था चलाता हैं। इन्हें गति शील बनाए रखता है। हृच्चक्र के ऊपर और नीचे तीन-तीन चक्र हैं · इन चक्रों की वैदिक संज्ञा है भूः. भुवः. स्वः। हृच्चक्र के नीचे क्रमशः. स्वः भुवः और भू चक्र हैं ऊपर भी क्रमशः स्वः भुवः और भू चक्र हैं। नीचे के भू भुवः स्वः तीनों चक्रों से ऊपर के भू भुवः स्वः चक्रों का सम्बन्ध है। नीचे मूलाधार चक्र से ऊपर के सहस्रार चक्र का. स्वाधिष्ठान चक्र से आज्ञा चक्र का - मणिपुर चक्र से विशुद्ध चक्र का शोधन होता है।

इन चक्रों में तीन प्रकार की शक्ति है - एक प्रजनन शक्ति. सहन करने की शक्ति तथा सत्य विवेचन द्वारा ज्ञान ग्रहण करने की शक्ति। इन समस्त सूक्ष्मताओं को समझ कर हमें अपने एक एक चक्र को पूर्ण स्वस्थ व पवित्र रखना चाहिए।

आसन व प्राणायाम—

—प्राणायाम मन्त्र

ओ३म् भूः। ओ३म् भुवः। ओ३म् स्वः। ओ३म् महः। ओ३म् जनः। ओ३म् तपः। ओ३म् सत्यम्।

—तैत्ति० १०।२७

हे देव! आपकी यह भू तत्व से वनी धरती उत्तम अन्न द्वारा हमारी जठराग्नि को प्रदीप्त रख प्राणों को बलिष्ठ बनाती रहे !

हे देव! आपका यह भुवः तत्व से निर्मित वायु तत्व हमारे शरीर के सूक्ष्म दोषों का हरण कर दुःखों से हमारी रक्षा करता रहे !

हे देव! स्वः तत्व से बना आपका यह जल रूपी अमृत और द्युलोक स्थित सौर शक्ति सदा हमें सुखों से परिपूर्ण रखे !

हे देव! आपका यह महत्तत्व से बना यह हृदय महान व उदार रहे जिससे मैं भी महान् वन सकूँ।

हे देव! आपकी जनः रूप सौर शक्ति जल से युक्त हो मुझ में उत्पादिनी शक्ति को स्थिर रक्खे !

हे देव! तपः रूप कष्ट सहन करने की क्षमता देने वाला यह वायु सौर शक्ति से युक्त हो मुझ में सहन करने का सामर्थ्य भरता रहे !

हे देव! सत्य रूप यह अग्नि तत्व सौर शक्ति से युक्त हो मुझ में ज्ञान व स्थिरता को जन्म देता रहे !

इन एक एक चक्रों के नाम स्मरण से हम प्रत्येक चक्र पर अपने ध्यान को केन्द्रित करें और प्रयत्न करें कि शरीर के भीतर स्थित चक्रों की गति का हम अनुभवन कर सकें !

चक्रों को एक ही स्थिति में स्थित करना आसन कहाता है! शरीर में कहीं भी टेढ़ापन न आने पावे! चाहे वैठे हों चाहे कठोर स्थल में सीधे

लेट जाएँ पर शरीर के चक्र विल्कुल सीधी स्थिति में रहें इसी का नाम आसन है।

इन चक्रों में वायु से क्रियाशीलता जन्म लेती है! अतः श्वासोच्छ्वास द्वारा हम इन चक्रों को बलिष्ठ वना सकते हैं और समस्त दाषों को दग्ध कर सकते हैं। अग्नि इन चक्रों को भीतर से पुष्ट करता है। वायु तत्व इनको गति देता है. संचालित करता है तथा जल तत्त्व इसमें स्निग्धता वनाए रखता है।

प्राणायाम करते हुए मन को एक एक चक्र पर केन्द्रित करें और अनुभव करें कि-मेरा यह चक्र अव वलिष्ठ व गतिशील हो रहा है। इसके साथ-साथ शरीर की इस सुन्दर आश्चर्य जनक रचना का सूक्ष्म दर्शन करते चले जाएँ। शरीर को सीधा रख हम किसी भी स्थिति में दीर्घकाल तक स्थिर रहने का अभ्यास करें। यह शारीरिक स्थिरता अन्त में ध्यान और समाधि में अत्यन्त सहायक होती है!

श्वास को लेने में मन्द गति. भर कर स्थिरता और त्यागने में तीव्रता यह प्राणायाम का मूल सूत्र है। श्वास को धीरे धीरे लें. लेकर सामर्थ्यानुसार स्थिर रखें और फिर उसे वमन के समान वेग से वाहर फेंकें फिर विना श्वास लिए वाहर ही रोके रखें। वाहर ही श्वास को रोकते समय पायु [मल द्वार और उपस्थ] को ऊपर की ओर खींच कर रखने से श्वास को वाहर रोके रहने में सहायता प्राप्त होती है।

सीधे आसन से शरीर में रक्त का संचरण वहुत उत्तम होता है और प्राणायाम से एक एक अंग के दोष धीरे धीरे नष्ट हो जाते हैं। टेढ़े वैठने से चक्रों में विकृति जन्म लेती है। अतः हमेशा सीधे वैठें कठोर स्थल पर सीधे ही सोएँ और हमेशा गहरी सांस लेने का अभ्यास करें।

प्रत्याहार –

ब्रह्माण्ड दर्शन – – अघमर्षण म

ओ३म् ऋतं च सत्यं चाभीद्धात् तपसोऽध्यजायत
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः ।

– ऋक्० १०।१९

ओ३म् समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत । अ
रात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी ।

– ऋक्० १०।१९

ओ३म् सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ।

– ऋक्० १०।१९

हे सकल जगत् के उत्पत्ति कर्ता सविता देव ! अ
प्रगाढ़ अन्धकार में लीन ऋत-ज्ञानमय चेतन सुषुप्त आत्मा
को तथा सत्यं-सत रज तम गुण युक्त प्रकृति रूप परमा
को आपने चारों ओर से गति शीलता प्रदान की. दीप्ति
किया और अपने अनन्त सामर्थ्य से उन्हें सृष्टि रूप में उ
किया । प्रकृति के घनीभूत होने से अन्धकार की प्रगाढता
हुई और इस तरह रात्रि का निर्माण हुआ । फिर द्युलोक. अ
रिक्ष लोक एवं भू लोक'तीन लोकों रूपी सागर की प्रस्था
कर आप ने काल चक्र की परिधि भी नियत की ।

हे परम पिता प्रभो! इन तीनों लोकों के कर्ता. धर्ता. हर्ता एकमात्र आप ही हो तथा आपने ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अपने सामर्थ्य से वश में कर रखा है।

हे आनन्दमय प्रभो! प्रत्येक कल्प के आदि में आप इसी तरह सूर्य चन्द्र से युक्त तीनों लोकों की रचना करते रहते हो। आप ने ही इस सम्पूर्ण विश्व को धारण किया हुआ है।

शरीर के सूक्ष्म दर्शन और ब्रह्माण्ड के विराट् स्वरूप के दर्शन से हृदय में प्रभु के प्रति प्रीति के भाव उभरते हैं। इस से मनुष्य का अहं नष्ट होकर प्रभु के प्रति आस्था बढ़ती है और जैसे जैसे मानव प्रभु के निकट जाता हैं वैसे वैसे उस के पापों का परिहार होता जाता हैं। प्रभु के सानिध्य से प्रकृति के प्रति राग कम होता जाता है और मन विषयों से पराङ्मुख हो जाता है। यही प्रत्याहार या अघमर्षण कहाता है।

सृष्टि की उत्पत्ति और स्थिति का यथावत् दर्शन कर के पिण्ड और ब्रह्माण्ड की समरूपता प्रत्यक्ष दीख पड़ती है। हमारे भीतर भी पंच भूत. पंच ज्ञानेन्द्रियों के रूप में तथा त्रिलोकी शरीर के तीन भागों में ठीक इसी प्रकार स्थित है जिस तरह ब्रह्माण्ड में। स्थूल शरीर और स्थूल ब्रह्माण्ड का याथातथ्य ज्ञान हमारे अहं को छिन्न भिन्न कर देता है। अहं के नष्ट होने से मनुष्य की स्वेच्छाचारिता नष्ट हो पाप का अघमर्षण होता जाता है।

यहाँ तक सन्ध्या का प्रथम पड़ाव समाप्त होता है! जो स्थूल शरीर और स्थूल ब्रह्माण्ड का बोध मात्र है।

सन्ध्या के एक एक मन्त्र को पढ़कर इस पर मनन करना चाहिए और साथ ही अर्थ का चिन्तन भी। परमात्मा के जिस गुण का

स्मरण करते हैं उस से उसी शक्ति की याचना करनी चाहिए और ध्
देना चाहिए कि कौन से दोष हैं जिन की विद्यमानता में हम परमा
के उस गुण को धारण नहीं कर पा रहे हैं इस का निराकरण कैसे हो
कैसे हम गुण को धारें। इस आत्म चिन्तन के द्वारा अपना पूर्ण निरी
करना चाहिए।

सन्ध्या का प्रथम भाग हमें एक मात्र शारीरिक रूप से सं
स्वस्थ रहने की प्रेरणा देता है। सन्ध्या का प्रथम फल है उत्तम स्वा
की प्राप्ति। इस में क्रियात्मिक रूप से प्रवृत्त रहना सन्ध्या की सा
कता है। कम से कम चालीस मिनट इस भाग के चिन्तन में लग
चाहिए।

आच

यदि शरीर में कफ और आलस्य का रंच मात्र भी आभास
तो पुनः शन्नो देवी. मंत्र से तीन आचमन कर लें।

— आचमन म

ओ३म् शं नो देवीरभिष्टय. आपो भवन्तु पीत
शंयो रभि स्रवन्तु नः। —यजु० ३६

हे अन्तर्यामिन्. दिव्य गुणों से युक्त सरस्वती. देवी
प्रभो! आपका बनाया हुआ यह शीतल जल हमारे
अत्यन्त सुख और शान्ति को देने वाला है। आपके इस
के सूक्ष्म कण समस्त अन्तरिक्ष में व्याप्त हैं। यही कण घ
भूत होकर जब मेघ रूप में बरसते हैं और धरती को धन ध
से भरपूर कर देते हैं तब चारों ओर समृद्धि होकर हमारे अ
की सिद्धि होती है।

इस प्रकार यह जल जहाँ हमारे अभीष्ट की सिद्धि करता है वहाँ इसकें पान करने से आनन्द की अनुभूति और तृप्ति होती है। हे देव ! ऐसी कृपा कीजिए कि - चारों ओर से यह जल हम पर सुख. शान्ति और कल्याण की वर्षा करता रहे !

आपके बनाए इस अद्भुत सरस रस से हममें सदा तृप्ति बनी रहे। हमारा मन शान्त रहे और शरीर में शान्ति की स्थिरता हो।

इस मन्त्र से तीन आचमन कर पुनः आगे की सन्ध्या यात्रा आरंभ होती है। प्राणायाम से कण्ठ में रूक्षता आती है किन्तु प्राणायाम के तुरन्त बाद जल पीना निषिद्ध है। अतः कुछ काल के बाद यह आचमन मन्त्र पढा जाता है।

आगे धारणा की स्थिति में शारीरिक दृष्टि से सर्वथा तृप्ति व शान्ति की आवश्यकता होती है। कण्ठ में कफ आदि होने से भी ध्यान में बाधा आती है अतः आचमन का विधान किया गया है।

धारणा—

— मनसा परिक्रमा मन्त्र

ओ३म् प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो ऽस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः। —अथर्व० ३।२७।१

हे प्रकाश स्वरूप ज्योतिर्मय प्रभो ! आप ने अपनी इस विलक्षण ब्रह्माण्ड की रचना से हमें मन्त्र मुग्ध कर दिया है। इस विराट् जगत् की एक एक दिशा में आप ने अपनी दिव्य शक्तियों के केन्द्र स्थापित कर दिए हैं। अपनी पंच महाभूतों की एक एक सूक्ष्म शक्ति तथा सोम शक्ति को एक एक रूप में बिखेर दिया है।

हे सर्व शक्तिमान देव ! आप की इस रचना में पूर्व दिशा में अधिपति के रूप में आप ने अग्नि तत्व को प्रस्थापित किया है। यह अग्नि तत्व ब्रह्माण्ड का सर्वोपरि तत्व है। इस तत्व की किरणें जो बन्धन रहित हैं जिस की तरग सृष्टि के कण-कण में अबाध गति से संवरण करती हैं। आदित्य देव सूर्य इस तत्व का मुख्य प्रतीक व केन्द्र है। यह तत्व हमारे शरीर में प्राणरूप तथा आँखों में दृष्टि शक्ति के रूप में अवस्थित है।

इन अनन्त शक्तियों के स्वामी ! मैं आप के समक्ष शीश झुकाता हूँ अर्थात् आप को ही सर्वोपरि मानता हूँ। इस अग्नि रूप तत्व में आप ही इस के अग्नि रूप अधिपति हो अतः आप ही को नमस्कार करता हूँ। इन बन्धन रहित मुक्त किरणों के रक्षक भी आप ही हो अतः रक्षक के रूप में मैं आप को नमस्कार करता हूँ। आदित्य रूप जो सूर्य इस अग्नि तत्व का मुख्य प्रतीक है इस आदित्य के भी आप ही प्रकाशक हो अतः आप को ही नमस्कार करता हूँ। इन समग्र शक्तियों से

हम अपने सामर्थ्य को बढावें और इनका योग्य उपयोग कर सकें ऐसा सामर्थ्य आप हमें प्रदान कीजिए। इस पूर्व दिशा से जो भी तत्व हमें क्षति पहुँचाते हैं या हम उन्हें क्षति पहुँचाते हों। इन दोनों को भी आप अपने न्याय रूप दण्ड से नियंत्रित रखिए।

ओ३म् दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि. यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः। –अथर्व० ३।२७।२

हे परमेश्वर्य के स्वामी सतत क्रिया शील प्रभो ! आप ने ब्रह्माण्ड के दक्षिण भाग में अपने वायु तत्व को प्रस्थापित कर रक्खा है। इस दक्षिण दिशा का अधिपति इन्द्र रूप वायु है। तिरछी गति से चलने वाले प्राणी और लोक लोकान्तर इस वायु तत्व के रक्षक हैं और वे वायु तत्व से रक्षित हैं। कर्म काण्ड में निष्णात पुरुषार्थ में रत रहने वाले तथा निरन्तर पालन व रक्षण में रत चेतन तथा अचेतन तत्व ही इस के प्रतीक हैं। ऐसे वायु तत्व के निर्माता प्रभो ! मैं आप की महानता के सामने. शक्ति के सामने नत मस्तक हूँ। इस अधिपति रूप इन्द्र के भी आप अधिपति हो। ऐसे अधिपति के लिए मैं आप का अभिनन्दन करता हूँ। पालन पोषण व रक्षण करने वाले पितरों तथा पालक पोषक तत्त्व रूप प्रतीकों के भी आप ही प्रतीक हो अतः मैं आप की पालन पोषण करने वाली

क्षमता के समक्ष शीश झुकाता हूँ। आपकी इन समस्त दिव्य-
ताओं और सामर्थ्यों के लिए आप ही को नमस्कार है।

हे मेरे देव ! दक्षिण से इन वायव्य लोक के जिन तत्वों व
प्राणियों से हमें हानि पहुँचती है या हम जिन्हें हानि पहुँचाते
हैं उन दोनों को आप अपने न्याय रूप अनुशासन में रखिए।
सूक्ष्म रूप में त्वक् रूप ज्ञानेन्द्रिय और कर्म में प्रवृत्त कर्मेन्द्रियों
के आप ही स्वामी हो। मेरे दक्षिण भाग में स्थित इन्द्र शक्ति
को मैं जान कर ऐश्वर्य शाली बन जाऊँ।

**ओ३म् प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षिता-
न्नमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो
नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि. यं
वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।** —अथर्व० ३।२७।३

हे समस्त भोग्य पदार्थों के देने हारे वरणीय प्रभो ! आप
की इस विशाल सृष्टि के पश्चिमी भाग में आप ने जल तत्व
को स्थित कर रखा है जिस से जल रूप में आप इस ब्रह्माण्ड का
सिंचन करते हो। पश्चिम दिशा का अधिपति यह जल रूप
वरुण देव है जिस को प्राप्त करने सृष्टि का कण कण लाला-
यित रहता है। इस जल तत्व में पेट के बल तैरने वाले प्राणी
और लोक लोकान्तर इस तत्व के रक्षक हैं और जो इस से
सदा रक्षित हैं। इस जल के प्रतीक के रूप में नाना प्रकार के
अन्न हैं।

ऐसे दिव्य तत्व के दाता प्रभो ! मैं आप को सश्रद्ध नमस्कार करता हूँ । इस वरुण रूप अधिपति के भी आप अधिपति हैं मैं आप को नमस्कार करता हूँ । पेट के वल तैरने वाले रक्षा के साधन व स्वयं जल से रक्षितों के रक्षक आप ही हो । मैं आप के अनुशासन व सामर्थ्य को स्वीकार करता हूँ । ऐसे दिव्य गुणों से युक्त वरुण प्रभो ! मैं आप की आज्ञा का अन्तः करण से परि पालन करता हूँ । पश्चिम दिशा तथा इस जल तत्व से होने वाली हानियों और जल को हम से पहुँचने वाली हानियों को आप ही अनुशासित कीजिए । आप का ही अनुशासन सर्वोपरि है यह मैं स्वीकार करता हूँ । मेरे शरीर में जिह्वा रूप में स्थित ज्ञान शक्ति और रस तत्व के व्यापार की संरचना को जान कर मैं अभिभूत हो गया हूँ आप की दिव्यताओं का मैं किस विध वर्णन करूँ ?

ओ३म् उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताऽशनिरिषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । यो३स्मान् द्वेष्टि. यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः । —अथर्व० ३।२७।४

हे सुख शान्ति और कल्याण के देने हारे जगत् के उत्पत्ति कर्ता देव ! इस ब्रह्माण्ड के उत्तर भाग में सोम रूप दिव्य शक्ति का आप ने आधान किया है । इस उत्तर दिशा का अधिपति सोम ही है । इस सोम तत्व से ही चन्द्रमा और मेरे मनस् तत्व का निर्माण हुआ है । यह सोम उत्तर दिशा का स्वामी

है। स्वयं जन्म लेने वाली वनौषधियाँ. जडी. वूटियाँ इस सो
तत्व की रक्षा करती है और सोम इनकी रक्षा करता है
विद्युत शक्ति सोम की प्रतीक रूप है जिससे इस सोम तत्व
बोध होता है। ऐसे कमनीय तत्व के बनाने हारे देव! आ
के लिए मेरा बारंवार प्रणाम हो। इस सोम रूप अधिप
को मैं वारंवार प्रणाम करता हूँ। वनौषधि द्वारा रक्षित त
जिससे वनौषधियाँ रक्षित हैं. उस रक्षा करने वाले का भी रक्ष
जो प्रभु है मैं उन को शीश नवाता हूँ। विद्युत् जिस का स्
प्रतीक है ऐसे प्रतीक का भी जो प्रभु प्रतीक है मैं उसे नमस्क
करता हूँ।

उत्तर दिशा से तथा चन्द्र. वनस्पति और विद्युतादि से य
कोई हमें क्षति पहुँचाता है या हम से कोई द्वेषित होता है।
अनुशासक! हम दोनों को आप अपने अनुशासन में रखिए
आप ही दोनों के नियामक हैं।

यही सोम रूप तत्व मनस् तत्व के रूप में मेरे पिण्ड
स्थित है। इस मनस् तत्व का नियमन करना आवश्यक है।

**ओ३म् ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षि
वीरुध इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षि
तृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि
यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।**

—अथर्व० ३।२७

यह जो नीचे की दिशा है उस की अधिपति रूप यह पृथिवी है। चित्र विचित्र रूप लिए ये जो वृक्ष हैं वे पृथिवी से रक्षित हैं और पृथिवी इन से रक्षित है। वडे वडे पर्वत इस पृथिवी के मुख्य प्रतीक हैं। इन सव शक्तियों के धारण कर्ता प्रभो! मैं आप को नमन करता हूँ। आप ही धरती के अधिपति हैं अतः मैं आप को नमस्कार करता हूँ। वृक्ष धरती के रक्षक और धरती वृक्षों की रक्षक है इन दोनों का रक्षक प्रभु है उसे हमारा नमस्कार हो। पर्वत धरती के प्रतीक हैं और उनका भी प्रतीक प्रभु है। उस महान प्रभु को हमारा श्रद्धापूर्वक नमस्कार हो। इन सव के आधार भूत प्रभु को हमारा नमस्कार है।

नीचे की दिशा से जो हम से द्वेष करे या हम किसी से द्वेष करें हे प्रभु! आप दोनों को ही अनुशासित रखते हैं। आप के ही न्याय विधान में दोनों बन्धित हैं।

हे देव! आप ने पृथिवी तत्व को नासिका में स्थित किया है जिस से गन्ध का ग्रहण होता है। आप की यह कैसी अद्भुत रचना है।

ओ३म् ऊर्ध्वा दिग् बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः। —अथर्व० ३।२७।६

हे सकल ज्ञान के देने हारे अविनाशी अक्षर प्रभो ! आप के इस ब्रह्माण्ड में ऊपर की दिशा का बृहस्पति रूप आकाश तत्व इस का अधिपति है। इस आकाश में स्थित शब्द रूपी वाणी से ही मनुष्य ज्ञान प्राप्त करता है। अतः आकाश तत्व से शब्द रक्षित है और शब्द से आकाश तत्व की रक्षा होती है। शब्द की रक्षा ज्ञानियों द्वारा भी होती है। वर्षा आकाश की प्रतीक रूप है इस सब के स्रष्टा देव ! मैं आप को नमस्कार करता हूँ। बृहस्पति के भी अधिपति आप हो अतः आप के चरणों में श्रद्धा से शीश झुकाता हूँ। रक्षितों के भी रक्षक प्रभो ! मैं हृदय से आप के प्रति आदर के भाव व्यक्त करता हूँ। हे प्रतीकों के प्रतीक देव ! मैं आप के समक्ष नत मस्तक हूँ। जो रक्षा के प्रमुख साधन हैं उन का भी जो मुख्य साधन हैं उन्हें मैं नमस्कार करता हूँ।

ऊपर की दिशा में शब्द रूप में व्याप्त और हमारे देह में श्रवण इन्द्रिय के रूप में व्याप्त देव ! मैं सर्वात्मना आप की आज्ञाओं का पालन करने वाला बनूँ। ऊपर की दिशा से कोई हमारी विरोधी शक्ति हमारा अथवा हम किसी का प्रतिरोध न करें दोनों को आप अनुशासित कीजिए।

—स्थूल से सूक्ष्मता की ओर

सन्ध्या के दूसरे भाग में शरीर और ब्रह्माण्ड की सूक्ष्म शक्तियों का दर्शन है। शरीर के धरातल से उठ कर अब हमें मानसिक धरातल पर आना होता है। अब हम अपने स्थूल शरीर को भूल जाएँ और सूक्ष्म शरीर और ब्रह्माण्ड की सूक्ष्म शक्तियों का ध्यान करें।

मुख्य रूप से छः दिशाएँ हैं जो क्रम से प्राची, दक्षिणा, प्रतीची, उदीचि, ध्रुवा और ऊर्ध्वा नाम से द्योतित हैं। मुख के सामने की दिशा पूर्व, सीधे हाथ की दक्षिण, पीछे की प्रतीची, बाएँ हाथ की उदीचि, नीचे की ध्रुवा और ऊपर की ऊर्ध्वा। इन छहों दिशाओं में परमात्मा ने अपनी प्रकृति रूप एक एक सूक्ष्म शक्ति को स्थित कर दिया है यह छः शक्तियाँ हैं पंच भूत और छठा चन्द्रमा। शरीर में पंच ज्ञानेन्द्रियाँ और छठा मन। चन्द्रमा मनसो जातः। चन्द्रमा और मन एक ही तत्व के बने हैं। एक एक दिशा में मन से परिक्रमा करते चलें यही मनसा परिक्रमा है। सूक्ष्म शरीर में मन द्वारा ही सारा कार्य संचालित होता है।

इन छः मन्त्रों में प्रत्येक मन्त्र में एक दिशा फिर उस दिशा का अधिपति, अधिपति का रक्षक, एवं रक्षित पदार्थ। अधिपति का साधन या इस का सामर्थ्य इषवः शब्द से बताया गया है। इन इषुओं में अनेक विधता और बहुत सामर्थ्य होने से बहुवचन का प्रयोग हैं। इस प्रकार प्रत्येक मंत्र में दिशा, अधिपति, रक्षिता और इषवः चार बातें स्पष्ट की गई हैं। इसी पृष्ठ भूमि में इन मंत्रों पर मनन कर उस के रहस्यों को जानने का प्रयत्न करें। सूक्ष्म दर्शन से रचनाकार के प्रति हमारा विश्वास दृढ़ से दृढतर हो जाता है और बद्ध मूलता आती है। उस सृष्टिकार के प्रति आस्था के भाव जगते हैं। धीरे धीरे अभ्यास से साक्षात् करने की धारणा बलवती होती चली जाती है।

ध्यान –

– उपस्थान मन्त्र

ओ३म् उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्। –यजु० ३५।१४

हे सूर्य के समान प्रकाशक देव ! आप की अनुकम्पा हम ने मनुष्य जन्म प्राप्त किया है जो समस्त योनियों उत्कृष्ट है इसीलिए हम उत्कृष्ट हैं। इस उत्कृष्ट जीवन में अज्ञान-अन्धकार से ऊपर उठना है। आप के आलोक में वि रना है। भौतिक अन्धकार को दूर करने वाला यह जो सूर्य है उस के भी रक्षक आप ही हैं। आप ही ने इस दिव्य. उत्त तर ज्योतिपुञ्ज का निर्माण किया है। हे देव ! आप की उत्कृष्टतर ज्योति को देखते हुए इस से भी परे. उत्तर आप की जो अत्यन्त सूक्ष्म. अत्यन्त सुख दायिनी. आनन्द प्र भिनी सर्वोत्कृष्ट स्वः ज्योति है उस उत्तम ज्योति रूप आप हम निरन्तर ध्यान द्वारा प्राप्त करें। हे प्रकाशमान् देव आप हमें अपने आलोक से आलोकित कर दीजिए हम भौतिक ज्योति से आनन्द रूप आप की उत्तम ज्योति का स कर सकें ऐसा सामर्थ्य हमें प्रदान कीजिए।

मैं अत्यन्त एकाग्र मन से आप का ही ध्यान कर रहा मैं एक ऐसी वर्णनातीत अनुभूति का अनुभवन कर रहा जिसे मैं वाणी द्वारा न तो प्रकट कर सकता हूँ न उस को आँख से देख ही सकता हूँ क्योंकि आप इन्द्रियातीत हो अज्ञान का आवरण हट रहा है ज्ञान का प्रकाश झिल मि रहा है। भौतिक सुख. ऐश्वर्य सब कुछ नीरस सा हो चला है इस की क्षण भंगुरता स्पष्ट झलक रही है। आप के अन्त साहचर्य का बोध मुझ में नया आधार जमा रहा है।

हे प्रभो ! तमोगुण प्रधान इस प्रकृति के बन्धन से परे जो महान् अनन्त आनन्द रूप सागर है उस आनन्द लोक की उत्तम ज्योति को मैं देखने आतुर हूँ। मैं उत् से उत्तर और उत्तर से उत्तम ज्योति को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हूँ। यह एक ऐसा अवर्णनीय ज्ञान का सूक्ष्म प्रकाश है जहाँ किसी प्रकार का सन्देह. भ्रम. शंका. अज्ञान का लेश नहीं है। श्रद्धा पूर्वक आत्मा और परमात्मा का यह मिलन है।

इस समस्त पिण्डीय. ब्रह्माण्डीय शक्तियों के पीछे जो एक अलौकिक ज्योति इन्हें गति प्रदान कर रही है. उस के जानने की अभिलाषा भक्त को और गहरे ले जाती है यह है सूक्ष्मातिसूक्ष्म शरीर। आत्म-विस्मृति की सी स्थिति। गहरी निद्रा में जैसे बाह्य विषयों से दूर हो जाते हैं वैसे ध्यान मग्न हो जाना यह तीसरी स्थिति है सन्ध्या की।

समाधि—

ओ३म् उदु त्यं जातवेदसं. देवं वहन्ति केतवः।
दृशे विश्वाय सूर्यम्। —यजु० ३३।३१

हे आनन्द स्वरूप भगवन्! निश्चय से आप के दिव्य ज्ञान से प्रबुद्ध प्रकाश रूप दिव्यता का मैं साक्षात् अनुभवन कर रहा हूँ। मेरी ज्ञान रश्मियों से जिस आनन्द का उद्वहन हो रहा है देव! मैं उस आनन्द में समा जाना चाहता हूँ। इस क्षण भंगुर भौतिक जीवन से मैं उस आनन्द से परिपूर्ण दिव्य जीवन को पा लेना चाहता हूँ। जहाँ मैं जन्म और मरण की क्षण भंगुर व्यवस्था से पृथक् आप से संयुक्त रहूँगा। जहाँ

आप के सम्पूर्ण स्वरूप और सामर्थ्य को प्रत्यक्ष कर सकूं
मेरे पिता ! इस देहमय जीवन से मेरा राग नष्ट हो रहा
आप के सम्पूर्ण दर्शन के लिए मैं आतुर हूँ । नाथ! कृपा
मृत्युमय जीवन का अन्त कर उस दिव्य दीर्घ जीवन की का
करता हूँ । मैं आपकी इस आनन्दमयी गोद से लौटना
चाहता ।

समाधि—

—आत्म विस

ओ३म् चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्र
वरुणस्याग्नेः । आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं
आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा । —यजु० ७

हे मेरे पिता ! आप का दर्शन. अनुभवन कितना आश्च
जनक है । कैसी अद्भुत है आप के स्पर्श मात्र की यह सु
अनुभूति ! आप दिव्य गुणों से युक्त आत्माओं के सम्बल
सशक्त आधार हो । आप अपने मित्रों के चक्षु रूप पथ प्रद
बन जाते हो । हे देव ! जो आप का वरण कर लेता है
आप अपनी दिव्य ज्योति से ज्योतिष्मान् कर देते हो ।

हे देव ! इस त्रिलोकी के कण-कण में आप कीर्
अग्नि रूप प्रकाश स्वरूप ज्योति व्याप्त हो रही हैं । द्यु. पृथि
और अन्तरिक्ष में सर्वत्र आप परिपूर्ण हो रहे हो । चराचर
जगत् के कण-कण में आप प्रकाशमान हो रहे हो । इस

जगत् से ही आप प्रकाशमान नहीं हो अपितु हमारी आत्मा रूप चेतन सत्ता में भी आप प्रकाशमान हो कर जगमगा रहे हो। आप का यह स्वरूप प्रशंसा के योग्य है। वस ! चतुर्दिक आप का ही स्वरूप आनन्द घन बन छा रहा है।

आप के इस दिव्य स्वरूप का स्तवन कितना आनन्दमय है। आप कितने प्रशंसनीय हो। आप तो चतुर्दिक दिव्यता को लिए हुए हो। कृपा कर मुझे भी अपना दिव्य सामर्थ्य प्रदान कीजिए नाथ ! इसीलिए मैं आप की शरण में उपस्थित हूँ। आप मेरे इस प्रशंसा भरे अशब्द रूप शब्दों को स्वीकार कीजिए स्वीकार कीजिए स्वीकार कीजिए।

समाधि से पुनरागमन—

—आयुष्काम मन्त्र

ओ३म् तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं. जीवेम शरदः शतं श्रृणुयाम शरदः शतं. प्रब्रवाम शरदः शतं:. अदीनाः स्याम शरदः शतं. भूयश्च शरदः शतात् । – यजु०.३६।२४

हे देव ! आप मेरे आँखों के प्रकाश बन कर मेरा पथ प्रदर्शन कर रहे हो। अव मैं निश्चय से उस दिव्य. हितकारी मार्ग पर निरन्तर तीव्र गति से आगे बढ़ता जाऊँगा। अतः मेरे नाथ! मेरे शरीर के मुख्य अंगों में उन के सामर्थ्य को आप सुरक्षित रखिए।

हे देव ! मैं अपनी आँखों से सौ शरद् ऋतुओं तक
सकूँ। सौ वर्ष तक मैं मोक्ष पथ के पथिक के रूप में नित्य
रहूँ। अपने कानों से सौ शरद् ऋतुओं तक आप का ही गुण मोक्ष
सुनता रहूँ। अपनी वाणी से आप के ही गुणों का
करता रहूँ। मैं स्वाधीन व स्वस्थ स्थिति में जीवित रहूँ
सौ वर्ष से भी अधिक आयु यदि मोक्ष प्राप्ति के लिए
श्यक हो वह भी मुझे प्राप्त हो।

उद्देश्य की पुनरावृत्ति –

– गुरु

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं. भर्गो देवस्य
धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्। – यजु० ३

हे देव ! मैंने सन्ध्या के आरंभ में ही अपने संकल्प मेरे
दोहराया था कि मुझे भू से स्वः की ओर जाना है। इसी आ
प्राप्ति के लिए मैं उपासना के पथ पर आगे बढ़ रहा हूँ
स्वः. आनन्द रूप मोक्ष के देनेहारे देव ! आप ही प्राण
दुःखहर्ता और सुखस्वरूप हो अर्थात् सर्वस्व आप ही हो।
चर के उत्पत्ति कर्ता. वरेण्य तथा शुद्ध स्वरूप देव ! मैं आप
इसी प्रकार निरन्तर ध्यान करता हूँ। आप मुझे ऐसी सत्प्रेरणा
दीजिए कि मैं ऋतंभरा प्रज्ञा को प्राप्त कर सकूँ। मैं

संकल्प व अन्तिम निवेदन –

– प्रार्थ

हे ईश्वर दयानिधे ! भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादि
कर्मणा. धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः।

हे ईश्वर दया के सागर प्रभो ! आपकी अपार कृपा से मैं नित्य जप. उपासना आदि कर्मों के द्वारा धर्म. अर्थ. काम. मोक्ष की शीघ्र से शीघ्र सिद्धि कर सकूँ । आप हमारी कामना पूर्ण कीजिए ।

प्रत्यावर्तन –

– समर्पण मन्त्र

ओ३म् नमः शम्भवाय च मयो भवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च । नमः शिवाय च शिवतराय च । – यजु० १६।४१

सब विध सुख शान्ति और कल्याण के देने हारे प्रभो ! मेरी प्रार्थना को. मेरे विनय को स्वीकार कीजिए । मैं आप की आज्ञाओं का. प्रेरणाओं का सब विध पालन करूँगा । मैं सर्वात्मना आप के लिए समर्पित हूँ । नाना रूपों में मैं आपका नमन करता हूँ । आप शंभु अर्थात् शान्ति के देने हारे हो । मय अर्थात् सुख के देने हारे हो । शंकर अर्थात् कल्याण करने हारे मयस्कर सुखकारी हो । हे शिव रूप कल्याण करने हारे प्रभो नाना प्रकार से हमारे कल्याण का मार्ग प्रशस्त करते हो अतः मैं वारंबार आपको प्रणाम करती हूँ ।

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

इति सन्ध्योपासना ।

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।
यद्भद्रं तन्न आ सुव।

— यजु० ३।

हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त, शुद्ध स्व सब सुखों के दाता परमेश्वर! आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दु दुर्व्यसन और दु खों को दूर कर दीजिए। जो कल्याणकारक, गुण, स्वभाव और पदार्थ हैं वह सब हम को प्राप्त कीजिए।

हे देव सवितर्, विश्वकर्ता, शुद्ध रूप महान् हे,
दुरितानि दुर्गुण, दुर्व्यसन से, मुक्त करता त्राण हे,
आचरण दो शुद्ध मुझ में, भद्र भावोद्गान है
पापहर्ता, शुद्धकर्ता, जो सुखद भगवान् है।

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसी
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां, कस्मै देवाय हविषा विधे

— यजु० १

जो स्वप्रकाशस्वरूप और जिसने प्रकाश करने हारे सूर्य, आदि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किये हैं, जो उत्पन्न हुए सम्पूर्ण ज का प्रसिद्ध स्वामी एक ही चेतनस्वरूप था, जो सब जगत् के उत्पन्न से पूर्व वर्तमान था, जो इस भूमि और सूर्यादि को धारण कर रहा "हम लोग उस सुखस्वरूप शुद्ध परमात्मा के लिए ग्रहण करने योगाभ्यास और अति प्रेम से विशेष भक्ति किया करें।

वर्तमान जो प्रलय काल में. प्राणिमात्र का स्वामी है.
सूर्य. चंद्र तारे अन्तर् में. सब का अन्तर्यामी है.
द्यौ. पृथ्वी और अन्तरिक्ष का. आश्रय वह कहलाता है.
कौन नियन्ता ? अर्चन किसका ? जो सुखरूप विधाता है।

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः. कस्मै देवाय हविषा विधेम।

– यजु० २५।१३

जो आत्मज्ञान का दाता. शरीर. आत्मा और समाज के बल का देनेहारा जिस की सब विद्वान् लोग उपासना करते हैं और जिसका प्रत्यक्ष सत्यस्वरूप शासन और न्याय अर्थात् शिक्षा को मानते हैं। जिसका आश्रय ही मोक्ष सुखदायक है जिसका न मानना अर्थात् भक्ति न करना ही मृत्यु आदि दुःख का हेतु है हम लोग उस सुखस्वरूप सकल ज्ञान के देनेहार परमात्मा की प्राप्ति के लिए आत्मा और अन्तःकरण से भक्ति अर्थात् उसी की आज्ञा पालन करने में तत्पर रहें।

आत्म ज्ञान और बल का दाता. विश्व जिसे अपनाता है.
देव प्रशंसा जिसकी करते. वही मरण का दाता है.
जिसकी दया असीम से मिलता. सबको जीवन दान है.
कौन नियन्ता ? अर्चन किसका ? जो सुखरूप महान् है।

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम।

– यजु० २३।५

जो प्राणवाले और अप्राणिरूप जगत् का अपनी अनन्त महिमा से एक ही राजा विराजमान है जो इस मनुष्यादि और गौ आदि प्राणियों के शरीर की रचना करता हैं. हम उस सुखस्वरूप सकलैश्वर्य के देनेहारे परमात्मा के लिये अपनी सकल उत्तम सामग्री से विशेष भक्ति करें।

महिमा से अनन्त जो अपनी. वह विराट् बन जाता है.
चर और अचर सकल जगत् का. वह सम्राट् कहाता है.
दोपाए चौपायों को. प्रभु देता संतत प्राण है.
कौन नियन्ता ? अर्चन किसका ? जो सुखरूप महान् है।

येन द्यौरुग्रा: पृथिवी च दृढा. येन स्व: स्तभितं येन नाकः
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः. कस्मै देवाय हविषा विधेम

– यजु० ३२।

जिस परमात्मा ने तीक्ष्ण स्वभाव वाले सूर्य आदि और भूमि को धारण. जिस जगदीश्वर ने सुख को धारण और जिस ईश्वर ने दु:खरहित मोक्ष को धारण किया है. जो आकाश में सब लोक लोकान्तरों को विशेष मानयुक्त अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं. वैसे सब लोकों का निर्माण करता और भ्रमण कराता है. हम लोग उस सुखदायक. कामना करने के योग्य. परब्रह्म की प्राप्ति के लिये सब सामर्थ्य से विशेष भक्ति करें।

उग्र सूर्य. पृथ्वी. शशि तारे. किया है जिसने भीतर धारण
वही मोक्ष सुख देने हारा. सभी दु:खों का करे निवारण
खग चर जैसे सभी ग्रहों को. घुमा रहा अन्तर्धान है
कौन नियन्ता ? अर्चन किसका ? जो सुखरूप महान् है

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो. विश्वा जातानि परि ता बभूव ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु. वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।

– ऋक्॰ १०।१२१।१०

हे सब प्रजा के स्वामी परमात्मा ! आप से भिन्न दूसरा कोई उन इन सब उत्पन्न हुए जड़ चेतनादिकों को नहीं तिरस्कार करता है अर्थात् आप सर्वोपरि हैं जिस जिस पदार्थ की कामना वाले हम लोग आप का आश्रय लेवें और वाञ्छा करें. वह वह कामना हमारी सिद्ध होवे जिससे हम लोग धनैश्वर्यों के स्वामी होवें ।

हे प्रजापति ! घट-घट व्यापक. तुम विन कौन रचे जग को.
कभी तिरस्कृत नहिं करते हो. मनुज कीट पशु या खग को.
भक्त कामना लेकर आए. अभयपूर्ण वरदान है.
हों ऐश्वर्य पति. धन स्वामी. यही विनय भगवान् है ।

स नो वन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा । यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ।

– यजु॰ ३२।१०

हे मनुष्यो ! वह परमात्मा अपने लोगों को भ्राता के समान सुखदायक. सकल जगत् का उत्पादक. व सब कामों का पूर्ण करने हारा. सम्पूर्ण लोकमात्र और नाम. स्थान जन्मों को जानता है और जिस सांसारिक सुख दु.ख से रहित नित्यानन्दयुक्त मोक्षस्वरूप धारण करने हारे परमात्मा में मोक्ष को प्राप्त होके विद्वान् लोग

स्वेच्छापूर्वक विचरते हैं वही परमात्मा अपना गुरु आचार्य. राजा औ
न्यायाधीश हैं. अपने लोग मिल के सदा उस की भक्ति किया करें।

है वह सुखदायक भ्राता. सकल जगत् का धाता है.
नाम. स्थान. भुवन. जन्मों का अखिल विश्व का ज्ञाता है.
देव मुक्त हो जहाँ विचरते. मोक्ष परम कल्याण है.
कौन गुरु और सखा हमारा ? सुखद रूप भगवान् है।

अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि दे
वयुनानि विद्वान् । युयोध्य३स्मज्जुहुराणमे
भूयिष्ठां ते नमःउक्तिं विधेम । — यजु० ४०।

हे स्वप्रकाश ज्ञानस्वरूप सब जगत् के प्रकाश करने हारे सब
सुखदाता मरमेश्वर ! आप जिस से सम्पूर्ण विद्यायुक्त हैं. कृपा कर
हम लोगों को विज्ञान वा राज्यादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये अ
धर्मयुक्त आप्त लोगों के मार्ग से सम्पूर्ण प्रज्ञान और उत्तम कर्म प्रा
कराइए और हम से कुटिलतायुक्त पापरूप कर्म को दूर कीजिये.
कारण हम लोग आप की वहुत प्रकार की स्तुतिरूप नम्रतापूर्वक प्रशं
सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें ।

हे अग्ने ज्योतिर्मय स्वामी. हमें सुपथ पर सदा बढ़ाओ.
हम हों धनी. सुसम्पत् कामी. सदा ज्ञान के शिखर चढ़ाओ.
पाप कुटिल. दुष्कर्मों से. यह चिता रहा धीमान् है
करें प्रार्थना हम सब उसकी. जो सुख रूप महान् है।

—इति ईश्वर स्तुति प्रार्थनोपास

ओ३म् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् ।
होतारं रत्नधातमम् । ऋक्० १।१।१

हे अग्नि रूप गतिशील देव! हम अग्निरूप आपको प्राप्त कर सकें। हम आप की बनाई इस भौतिक अग्नि के विज्ञान को जान कर इस अग्नि बल को प्राप्त कर परोपकार के कार्य में प्रवृत्त रहें तथा हितकारी मार्ग में आगे बढ सकें। यह अग्नि दिव्य गुणों से युक्त तथा समस्त ज्ञान और क्रिया की मुख्य आधार है. देवता है। समस्त ऋतुचक्र का निर्माण करती है। आदान और प्रदान की समस्त प्रक्रियाओं का मुख्य आधार अग्नि ही है। नाना प्रकार के रंग और रूपों का धारण करने हारी यह जो उभय विध अग्नि है उसे प्राप्त करते हुए आपके अग्नि रूप को जान सकें ऐसी कृपा कीजिए।

स नः पितेव सूनवेऽग्ने. सूपायनो भव। सचस्वा
नः स्वस्तये। ऋक्० १।१।९

हे देव परमात्मन्! आप हमारे पिता हो. हम आप के अमृत पुत्र हैं। आप सदा पुत्रवत् हम पर कृपा दृष्टि रखते हो। हे अग्नि रूप प्रभो! आप हमें सदा सुउपाय. उत्तम प्रेरणा परामर्श देते रहते हो। हम अपनें कल्याण के लिए सदा आप से संयुक्त रहें। आप द्वारा दी जाने वाली अन्तः प्रेरणा को हृदय पूर्वक स्वीकार कर तदनुकूल आचरण करते रहें।

स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः. स्वस्ति देव्यदि-
तिरनर्वणः। स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः. स्वस्ति
द्यावापृथिवी सुचेतुना। ऋक्० ५।५१।११

हे स्वस्ति के देने हारे प्रभो ! आप द्वारा बनाई गई सूर्य और चन्द्रमा की इस उत्तम अश्वि रूप जोडी के युगम से हम उत्तम ऐश्वर्य को प्राप्त करें। सौर शक्ति के द्वारा हम वर्षा को अपने नियन्त्रण में कर लें। हमारी इन्द्रियाँ सदा उत्तम रसों को प्राप्त कर पुष्ट व बलवती रहें ! द्युलोक से लेकर पृथिवी लोक तक स्थित समग्र शक्तियाँ हमें उत्तम शक्ति व चेतना प्रदान करें जिससे हमारा सब विध कल्याण हो।

स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै. सोमं स्वस्ति भुवनस्य
यस्पतिः। बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये. स्वस्तय-
आदित्यासो भवन्तु नः। ऋक्० ५।५१।१२

हे दिव्य गुणों से युक्त देव ! हम अपने कल्याण के लिए अन्तरिक्ष लोक के स्वामी वायु तथा चन्द्रमा के गुण और धर्म को निकट से जानें। इन से प्राणि मात्र के कल्याण के लिए होने वाले उपयोगों को जान कर हम उन से लाभान्वित हों। बृहस्पति आदि इसके निकटवर्ती अन्य लोक लोकान्तरों के उपयोग को जान कर हम निरन्तर अबाध गति से लाभ प्राप्त करते रहें।

विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये. वैश्वानरो वसुरग्नि स्वस्तये । देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये. स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः । ऋक्० ५।५१।१३

लोक लोकान्तरों के ज्ञानी श्रेष्ठ वैज्ञानिक जन. उत्कृष्ट शास्त्रों के ज्ञाता आध्यात्मिक देव जन वर्तमान में हमें उन्नति के मार्ग पर चलने की प्रेरणा करें । सर्वत्र विचरण करने वाले तपस्वी. सन्यासी गण हमारे जीवन में नव चेतना भरते रहें । ऐश्वर्यों के स्वामी हमारे जीवन में सहयोगी बनें । दण्ड विधान करने वाले शासक सदा सब विध हमारी रक्षा में प्रवृत्त रहें । अन्याय कभी न करें और सदा न्याय की रक्षा करें ।

स्वस्ति मित्रा वरुणा. स्वस्ति पथ्ये रेवति । स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च. स्वस्ति नो अदिते कृधि ।

ऋक्० ५।५१।१४

हे पालन करने हारे वरणीय प्रभो ! प्राण तथा अपान रूप दोनों शक्तियाँ हमारे लिए कल्याण करने वाली हों । हमारे मित्र गण तथा विद्वान पुरोहित हमें ऐश्वर्य युक्त निष्क-ण्टक मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते रहें । हमारा उत्तम ज्ञान व हमारे उत्तम कर्म अबाध रूप में हमें सदा स्वस्ति के मार्ग पर ले चलें । कृपा कर आप हमें कल्याण पथ पर आगे चलने की प्रेरणा कीजिए ।

स्वस्ति पन्थामनु चरेम. सूर्याचन्द्रमसाविव ।
पुनर्ददताऽघ्नता. जानता सं गमेमहि ।

ऋक्० ५।५१।१५

हे प्रकाश स्वरूप. तेजस्वी व शान्तिमय देव ! हम कल्याण मार्ग पर चलने के लिए आप की शरण में आते हैं । आप हमें सदा सुपथ पर चलने की प्रेरणा देते रहें । जिस प्रकार सूर्य और चन्द्रमा परस्पर अनुशासित होते हुए चलते हैं वैसे ही हम सदा परस्पर पिता-पुत्र. माता-पुत्री. पति-पत्नी. गुरु-शिष्य. भाई-बहन अपने से बडों का आदर कर उन के पथ का अनुसरण करें किन्तु हमारा यह अनुसरण सदा ज्ञान पूर्वक कृतज्ञता पूर्वक और अहिंसा युक्त ही हो ।

ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः । ते नो रासन्तामुरुगायमद्य. यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः । — ऋक्० ७।३५।१५

हे देवों के देव महादेव प्रभो ! आप कृपा कर हमें ऐसे महापुरुषों का सत्संग दीजिए जो सदा यज्ञमय जीवन वाले हों। जिन का यश कभी नष्ट नहीं होता । जो सत्य ज्ञानी और यज्ञ के रक्षक हों । हे देव ! हम श्रेष्ठ जनों के संग में रहते हुए उत्तम यश को प्राप्त करें । आप हमारे कल्याण के लिए आज ही प्रेरणा कीजिए जिस से हम सदा स्वस्ति के मार्ग पर चलें । इस मार्ग पर चलते हुए आने वाली बाधाओं से आप ही

हमारी रक्षा कीजिए। इस सदा कल्याण कारक कर्मों द्वारा सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करें।

येभ्यो माता मधुमत् पिन्वते पयः. पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः। उक्थ शुष्मान् वृषभराँ स्वप्नसस्. ताँ आदित्याँ अनुमदा स्वस्तये। –ऋक्० १०।६३।३

हे देव ! यह धरती माता सदा उत्तमोत्तम रसों से तथा गौ आदि के माध्यम से उत्तम पेय दूध. घृत. मक्खन आदि अत्यन्त स्वादिष्ट और मधुरिमा युक्त नाना प्रकार के पदार्थों से हमें तृप्त रखें। यह द्यूलोक में जगमगाता. अखण्डनीय सूर्य वृष्टि आदि के द्वारा धरती को हरा भरा रखे।

हे देव ! शुभ कार्य करने में प्रवृत्त जन सदा प्रशंसा को प्राप्त करें. सुखों से भरपूर रहें। हे मातृतुल्य प्रभो ! आप अपने पुत्रों का सदा कल्याण करने हारे हो। सदा अपने भक्तों पर कृपा दृष्टि बनाए रखते हो।

नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा. बृहद्देवासो अमृतत्व मानशुः। ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो. दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये। – ऋक्० १०।६३।५

हे स्वस्ति देनें वाले प्रभो ! आप की अनुकम्पा से हमें स्वार्थ रहित. दूरदर्शी. परम विद्वान तथा श्रेष्ठ कर्मों से युक्त उत्तम नेता प्राप्त हों. अपने कर्तव्य के प्रति सदा जागरूक

तथा आदर के योग्य महापुरुष हमें उपलब्ध होते रहें। सत्य के प्रकाशमान् पथ पर आरूढ. कभी किसी से वैर भाव न रखने वाले. पाप रहित. दिव्य गुणों से युक्त उच्च पद पर प्रतिष्ठा के योग्य नेता, हमें कल्याण पथ पर ले जावें.

सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुर. परिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम् । ताँ आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्. महो आदित्यां अदितिं स्वस्तये । -ऋक्० १०।६३।५

हे देव ! आप की कृपा से हमें ऐसे उत्तम शासक प्राप्त हों. जो राष्ट्रको निरन्तर प्रगति के पथ पर आगे बढाएँ। जो सदा उत्तम कार्यों में. परोपकार व जन सेवा में प्रवृत्त रहें। सरल. सीधे. कुटिलता रहित आचरण करने वाले. विनम्र. उत्तम जनों को हम शासन के जाज्वल्यमान पद पर आसीन करें। ऐसे अखण्ड व्रतधारी जन. उत्तम उपदेश व आदेश से राष्ट्र रथ को कल्याण मार्ग पर ले चलें।

को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ. विश्वे देवासो मनुषो यतिष्ठन। को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्. यो नः पर्षद्यत्यंहः स्वस्तये। -ऋक्० १०।६३।३

हे अन्तर्यामी देव ! उत्तमोंत्तम दिव्य गुणों से युक्त तथा सदा उत्तम नीति में स्थिर रहने वाले प्रशंसनीय जनों की हम सदैव प्रशंसा करें अर्थात् अन्यायी. स्वार्थी जनों की प्रशंसा हम कभी न करें। उत्तम ज्ञानी. पक्षपात रहित. द्वेष बुद्धि से दूर.

सद्गुणों से परिपूर्ण जन. हमें सदा स्वस्ति के पथ पर ले चलें। ऐंसे जन ही सदा हानिप्रद मार्ग व दोषों से वचा कर प्रजा की रक्षा करते हैं ।

येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः, समिद्धाग्नि मंनसा सप्त होतृभिः । त आदित्या अभयं शर्म यच्छत. सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये ।

—ऋक्० १०।६३।७

हे देव । जिस सप्तविध अग्नियों के द्वारा आप ने इस सृष्टि यज्ञ का आधान किया है । उस आप की यज्ञमयी सृष्टि में हम निरन्तर अच्छे पथ पर सदा भय रहित होकर चलें । उत्तम यज्ञ कर्मों के द्वारा सुगमता पूर्वक हम स्वस्ति-पथ को पूरा करें । हमारा सारा जीवन सुखों से परिपूर्ण रहे ।

य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः । ते नः कृतादकृतादेनस स्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ।

—ऋक्० १०।६३।८

हे सकल जगत् के रचयिता ! तीनों लोकों में उत्कृष्ट चेतना को भरने वाले चराचर जगत् के स्वामिन् ! हम आपके अद्भुत पराक्रम को मानते हैं । हे देव ! हमारे द्वारा किए हुए उत्तम कर्मों के फल स्वरूप आप हमें किए अनकिए पाप रूप कर्म से बचा कर हमें उत्तम स्वस्ति के मार्ग पर चलाइए । हम आप की ही शरण में आए हुए हैं ।

भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहें. ऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम् । अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं. द्यावा पृथिवी मरुतः स्वस्तये । – ऋक्० १०।६३।९

हे पिता ! हमें अपने इस जीवन संग्राम में आप को अपनी सहायता के लिए पुकार रहे हैं । सहायता के लिए स्नेह सिक्त हो कर बुला रहे हैं । दुःख तथा पाप कर्मों से मुक्त कराने वाले पिता ! आप हम में अनेक दिव्यताओं को जन्म दीजिए । हमें उत्तम कर्मों में प्रवृत्त कीजिए । हे ऐश्वर्य से परिपूर्ण पिता ! द्यु. अन्तरिक्ष और पृथिवी में अग्नि. मित्र वरुण और मरुत् आदि कें रूप में आप हमारी सहायता करते हो । आप हमें अग्नि रूप ज्ञानी प्रगतिशील. वायु रूप कर्म शील बनाओ । आप हमारे मित्र और वरण करने योग्य पिता हो । हम आप ही को अपनी रक्षा के लिए. अपने कल्याण के लिए श्रद्धा भाव से पुकारते हैं ।

सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं. सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम् दैवीं नावं स्वरित्रा मनागसम. स्रवन्तीमारुहेमा स्वस्तये । – ऋक्० १०।६३।१०

भव सागर से पार कराने व्वाले मेरे नाविक रूप प्रभो ! आप ने इस सृष्टि में हमें मनुष्य का जन्म देकर सृष्टि को. आप को तथा निज के स्वरूप को समझनें का अवसर दिया है। अपनी इस यात्रा को पूर्ण करने आपने कैसा दिव्य अलौकिक यह चोला प्रदान किया है। यह कैसी दिव्य नाव है ? जिस

पर आरूढ हो कर हम कल्याण के मार्ग पर आगे बढ़ सकते है।

अपनी उत्तम सुरक्षा के साधन रूप आप ने भुजाएँ दी हैं। इस शरीर को संयम के द्वारा हम वहुत शक्तिशाली बना सकते हैं। ब्रह्मचर्य का ओज द्युलोक के समान मुखमण्डल पर जग मगाए। हमारा हृदय सर्वथा दोष रहित हो। हमारी हर इन्द्रिय स्वस्थ रहे हम सुख पूर्वक बिना किसी वाधा के अपने व्रतों को पूर्ण करते रहें। हमारी सदा उत्तम कार्यों में गति हो। अपने भीतरी वाहरी शत्रुओं से हम सदा वचे रहें। मेरा एक एक अंग दोष रहित हो। मेरे शरीर में कहीं किसी प्रकार का कोई विकार न हो। ऐसा दिव्य जीवन आप का आश्रय लेकर हम विता सकें।

विश्वे यजत्रा अधिवोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिह्रुतः। सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये। ऋक्० १०।६३।११

हे प्रभु ! आप की अनुकंपा से हमें उत्तम विद्वान् धर्मात्मा पुरुषों का सत्संग प्राप्त हो। जो अपने पवित्र उपदेशों द्वारा हमें जीवन रक्षा के उपाय वतायें। सव विध श्रेष्ठ कर्मों में प्रवृत्त यजनशील विद्वान् हमारी रक्षा करें दुःखदाई हिंसवृत्ति तथा दुष्प्रवृत्ति से हमें वचाएँ। हे दिव्य गुणों से युक्त प्रभो ! इसीलिए हम आपको उत्तम प्रकारं की दिव्य स्तुतियों से पुकार रहे हैं। हे देव ! हमारे उत्तम कल्याण तथा सब विध रक्षा

के लिए आप हमारी पुकार को सुनते हुए हमें स्वस्ति के पथ पर ले चलिए।

अपामीवामप विश्वामनाहुतीमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः। आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनो रुणः शर्म यच्छता स्वस्तये। ऋक्० १०।६३।१२

हे मेरे स्तवनीय प्रभो! आप सब प्रकार के रोग के कीटाणुओं को हम से दूर रखिए। सब विध स्वार्थ वृत्ति से हमें बचाइए। अनुदारता तथा कजूसी की भावना को दुष्ट कर्मों में प्रवृत्त करने वाली बुद्धि व पाप वृत्ति को हम से दूर भगाइए। हे मेरे पिता! हमारे भीतर स्वाभाविक रूप से रहने वाली द्वेष की भावना को हम यत्न पूर्वक दूर भगा सकें। उच्चकोटि के महान् सुखों से हमें भरपूर कर दीजिए।

अरिष्टः स मर्तो विश्व एधते. प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि। यमाऽदित्यासो नयथा सुनीतिभिर् अति विश्वानि दुरिता स्वस्तये। ऋक्· १०।६३।१३

हे सुखों के दाता देव! शारीरिक मानसिक व आत्मिक स्वास्थ्य को धारण कर हम मनुष्य जन्म में सब विध उन्नत होते चले जायें। अत्यन्त धार्मिक उत्तम प्रजाओं [सन्तानों] के द्वारा हम विकसित होते रहें। सदा व्रतों से बँधे हुए श्रेष्ठ जन हमें उत्तम न्याय मार्ग पर ले जायें। सब प्रकार की आपदाओं तथा दोषों से बचते हुए हम विशेष सुख प्राप्ति के लिए कल्याण पथ पर बढते रहें।

यं देवासोऽवथ वाजसातौ, यं शूरसाता मरुतो हिते धने । प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिम रिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये । ऋक्० १०।६३।१४

हे परम तेजस्वी अत्यन्त कमनीय प्रभो ! प्रातः काल की पवित्र वेला में पूर्व दिशा से आने वाले अत्यन्त सुशोभित इस इन्द्र रूप ऐश्वर्य शाली रथ पर हम आरूढ हों जिसकी किरणें हमारी रक्षा करती हैं जो रोग नाशक हैं । जो सकल भोग पदार्थ अन्नादि को उत्पन्न करने में परम सहायक हैं । जो इस जीवन संग्राम में हमें वीरों की भाँति जूझने का असीम सामर्थ्य प्रदान करती हैं । जो हमें जागृत कर कर्म में प्रवृत्त करती है ऐसे हितकारी महारथ पर आरूढ हो कर हम स्वस्ति को प्राप्त करें ।

स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु, स्वस्त्यप्सु वृजने स्वर्वति । स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु, स्वस्तिराये मरुतो दधातन । –ऋक्० १०।६३।१५

हे मेरे साथी सखा प्रभो ! जब कभी हम आकाश में, नदी तथा समुद्र में लोक लोकान्तरों के गमन में, जन रहित एकान्त प्रदेशों में मार्ग को विसरा कर भटक जाते हैं, मार्गहीन हो जाते हैं तब आप ही हमें उत्तम मार्गों में प्रवृत्त कराते हो । जब हम माता के गर्भ में रहते हैं तब भी आप ही हमारी रक्षा करते हो । जब जब हम अपने को असहाय निरुपाय अनुभव करते हैं तब तब आप हमें भीतर से हिम्मत, साहस व प्रेरणा

प्रदान करते हो। इसलिए हम आप का स्तवन करते हैं। आप ही एक मात्र हमारे सहारे हो जो सदा कल्याण मार्ग में प्रवृत्त करते हो।

स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठाः रेक्णस्वस्त्यभि र्या वाम मेति। सा नो अमा सो अरणे निपातु. स्वावेशा भवतु देव गोपा। —ऋक्० १०।६३।१

हे नाना प्रकार के ऐश्वर्यों के देने हारे देव! आप निश्चय ही हमें स्वस्ति पथ पर ले जाने हारे हो यह हमारा दृढ़ विश्वास है। जो सुख हमें प्राप्त है और जिसे प्राप्त करने के लिए हम प्रयत्नशील हैं वह सब आप का ही दिया है। ऐसे आप के उत्तम ऐश्वर्य व सुख को हम ऋजु मार्ग पर चलते हुए प्राप्त करें।

कभी कभी स्वार्थी जनों से घिरे हुए हम अपने को एकाकी समझते हैं। इस संसार में आप का विश्वास ही हमारा आधार है। जिस प्रकार निर्जन वन में घर को पाकर मनुष्य आश्वस्त हो जाता है वैसे हम आप को पाकर आश्वस्त रहें। हे पिता! हमारे दिव्य गुणों व हमारी प्रभावशाली प्रिय पुकार के भी रक्षक आप ही हो। उत्तम सुख की प्राप्ति के लिए ही हम भक्ति भाव से आप की गोद में आ बैठे हैं।

इषे त्वोर्जे त्वा. वायवस्थ. देवो वः सविता प्रार्पयतु. श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या. इन्द्राय

भागं प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मा व स्तेन ईशत-माघशङ्सो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात, बह्वींर्य-जमानस्य पशून् पाहि । —यजु० १।१

हे दिव्यगुणों से युक्त सव के उत्पत्ति कर्ता देव ! आप के सूर्य रूप उत्तम ज्ञान और वायु रूप उत्तम कर्मों से हम उत्तम ज्ञान तथा उत्तम अन्नादि भोग्य पदार्थों को प्राप्त कर अत्यन्त वलवान् तथा सामर्थ्य युक्त हो जायँ हम फल की कामना से रहित सदा श्रेष्ठतम कर्मों में प्रवृत्त रहें । गृहस्थाश्रम में रहते हुए हमारी स्नेहसिक्त नारी हमारे ऐश्वर्य को बढ़ाने वाली हो । उत्तम स्वस्थ निरोग सन्तान को जन्म देने हारी हो । आलसी विना पुरुषार्थ के धन की कामना करनें वाले कर्म हीन जनों से हे प्रभु आप हमारी रक्षा कीजिए । पाप युक्त साधनों में प्रवृत्त पुरुषार्थी जनों से भी हमें वचाइए । हे देव ! कर्मक्षेत्र में हम निश्चय से वाणी के धनी हों । हमारी वाणी विश्वसनीय हो । ऐसे श्रेष्ठ कर्म और पुरुषार्थ में प्रवृत्त यजन शील यजमान के ऐश्वर्य की आप सव विध रक्षा कीजिए । साथ ही साथ हमारे ऐश्वयं की देनेंहारी गाय तथा अन्य पशुओं की भी आप रक्षा कीजिए दुग्धादि उत्तम भोग्य पदार्थ और अश्व बैल आदि उत्तम वाहनों की आप सदा रक्षा करें क्योंकि ये ही जीवन के आधार भूत साधन हैं ।

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु, विश्वतो ऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः । देवा नो यथा सदमिद् वृधे

असन्. नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे ।

– यजु० २५।१४

हे श्रेष्ठ कर्मों में प्रवृत्त करने वाले क्रतो ! आपकी अनुकंपा से हम चारों ओर से उत्तम श्रेष्ठ कल्याण कारक सुख देने वाले भद्र कर्मों में प्रवृत्त रहें । हम ऐसे कर्म करें जो निन्दित न हों । कर्म को विकृत करने वाला हमारा आचरण विपरीत न हो । अनेक श्रेष्ठ कर्मों को जन्म देने वाली हमारी क्रिया सदा कल्याणकारी हो । हमारे दिव्य कर्म सदा हमें उन्नति की ओर ले जाएँ । हम प्रमाद रहित आलस्यहीन होकर सदा रक्षा के साधनों से युक्त एवं सुरक्षित मार्ग से दिन प्रतिदिन उन्नति को प्राप्त होते रहें ।

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजुयतां. देवान२ङ रातिरभि नो निवर्तताम् । देवाना२ङ सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे । – यजु० २५।१५

हे अनन्त सत्प्रेरणाओं को देने हारे देव प्रभो ! आपकी कृपा से हमें दिव्य गुणों से युक्त प्रशंसनीय जनों की उत्तम बुद्धि व ऋजुनीति प्राप्त हो । श्रेष्ठ पुरुषों की उदारता पूर्वक दान देने की प्रवृत्ति हम में भी बनी रहे । हे पिता ! हम हमेशा उत्तम गुण कर्म स्वभाव वाले श्रेष्ठजनों से ही मित्रता करें । जिससे सुखपूर्वक जीवन के लिए दिव्य लोगों की श्रेष्ठ कर्मयुक्त आनन्द से परिपूर्ण दीर्घ आयु को सदा प्राप्त करते रहें ।

तमीशानं जगतस् तस्थुषस् पतिं धियंजिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे. रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये । —यजु० २५।१८

हे सकल ऐश्वर्यों के स्वामी ! जगत् के रचनें हारे देव ! हमारा यह अटूट विश्वास है कि आप ही इस चराचर जगत् के स्वामी समस्त ऐश्वर्यों से परिपूर्ण इस सृष्टि के निर्माण कर्ता हो । हमें सदा उत्तम कर्म व वुद्धि में प्रवृत्त करने हारे हो । आप ही हमारे रक्षक हो इसीलिए हम सदा रक्षा के लिए आप का ही आह्वान करते हैं । आप ही हम सव के पालक व पोषक हो हमें अनन्त सुख, ज्ञान व धन के देने हारे हो । आप अत्यन्त स्नेह से हमारा सब विध कल्याण कीजिए ।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः. स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः. स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु । —यजु० २५।१६

हे नानाविध ऐश्वर्यों के देने हारे देव ! आप ही हमारे उत्तम सामर्थ्य व ऐश्वर्य के बढ़ाने हारे हो । हे स्वस्ति के देने हारे प्रभो ! आप ही हमारे पालन पोषण कर्ता हो । समस्त ज्ञान विज्ञान के देनेहारे आप ही विश्ववेदा हो । आप हमारी स्वस्ति व कल्याण के लिए हमें उत्तम स्वास्थ्य व सुख प्रदान कीजिए । हे उत्तम ज्ञान से युक्त देव ! आप हमें भरपूर ज्ञान दीजिए जिस से हम उत्तम आचरण के द्वारा प्रगति पथ पर आगे बढ़ें । सम्यक् ज्ञानी बन कर समस्त ऐश्वर्यों को प्राप्त कर सकें ।

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा. भद्रं पश्येमाक्षभिर् यजत्राः । स्थिरैरंगैस् तुष्टुवांऽसस् तनूभि. व्यंशेमहि देवहितं यदायुः । —यजु० २५।२१

हे श्रुति का दान करने वाले प्रभो ! हम अपने कानों से सदा दिव्यताओं से भरी कल्याण मयी वेद वाणी का श्रवण करते रहें। हे श्रेष्ठ आचरण करने वाले याज्ञिको की रक्षा करने हारे प्रभो ! हम अपनी आँखों से सदा अच्छे प्रेरणादायक दृश्यों को देखें। हमारी दृष्टि सदा पवित्र रहे। हमारा अंग प्रत्यंग स्वस्थ अर्थात अपने में ही स्थिर रहे। उत्तम कर्मों में प्रवृत्त देवताओं की दीर्घ आयु को प्राप्त करते हुए हम आपकी स्तुति में ही अपने जीवन को धन्य समझें।

अ २ ग्न ३ आ १ या २ हि वी ३ त १ ये २. गृणा ३ नो २ ह ३ व्य १ दा २ तये। नि २ होता २ सत्सि ब ३ र्हि १ षि २। —साम० पू० १।१

हे ज्ञान के प्रकाश से आलोकित अग्नि रूप देव परमात्मन् ! आप अपने भक्तों के दुःखों को सब विध दूर भगाते हो इसलिए हम आप का आह्वान कर रहे हैं आप आइए और हमें दुःखों से सर्वथा मुक्त कर दीजिए। आप को प्राप्त कर के ही हमारे जीवन में एक प्रकाश व दीप्ति जगमगाएगी। हम अपनी समस्त स्तुति प्रीति. को आप के लिए अर्पित करना चाहते हैं भक्ति भावना से ओत प्रोत हो कर आप के दर्शन

के लिए लालायित हैं। हे देव! आप हमारे हृदय मन्दिर में विराजमान होकर हमारे हव्य को स्वीकार कीजिए।

त्व १ म २ ग्ने य ३ ज्ञा २ नां ३ हो २ ता ३. वि १ श्वे २ षां हि ३ तः २। दे ३ वे २ भि १ र् मा १ नु २ षे ३ ज १ ने २। —साम० पू० १।२

हे अखिल ब्रह्माण्ड के नियामक अग्नि रूप प्रभो! यह हमारा दृढ़ विश्वास हैं कि आप ही इस सकल ब्रह्माण्ड के रचयिता हो। लोक लोकान्तर में चल रही सारी व्यवस्थाओं के आप ही व्यवस्थापक हो। इस सृष्टि यज्ञ के होता आप ही हो। समस्त विश्व में दिखाई पड़ रही सारी हितकारी योजना के आप ही संयोजक हो। जन्म धर्मा मनुष्य भी आप की ही दिव्यताओं के द्वारा हितकारी कर्मों में प्रवृत्त होता है। हे देव! इसी लिए हम आप की उपासना में प्रवृत्त होते हैं। -

ये त्रिषप्ताः परियन्ति. विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।
वाचस्पतिर्बला तेषां. तन्वोऽअद्य दधातु मे।

—अथर्व० १।१।१

हे समग्र शक्तियों के धारक प्रभो! आप की इस चित्र विचित्र मनोहारी सृष्टि को आप ने अपनी त्रि सप्त अर्थात् तीन सत्ते इक्कीस शक्तियों के द्वारा नाना प्रकार से रूपायित कर रखा हैं। इन इक्कीस प्रकार की शक्तियों से विश्व को नाना रूपों में विभक्त कर आप ने धारण किया हुआ है। हे वाचस्पति! सृष्टि विज्ञान के ज्ञाता प्रभो! आप की विविध प्रकार की इन इक्कीस ब्रह्माण्डिय शक्ति को आप हमारे पिण्डरूप इस शरीर में भी सम्यक् रूपेण स्थापित किए रखें। उन्हीं शक्तियों व सामर्थ्यों के द्वारा ही हम स्वस्ति रूप कल्याण मार्ग को प्राप्त करने के योग्य बन सकते हैं।

शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः. शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या। शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः. शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ। —ऋक्० ७।३५।१

हे जगन्नियन्ता ! सुख शान्ति और कल्याण के देने वाले प्रिय प्रभो ! आप के द्वारा निर्मित सूर्य की शक्ति तथा अग्नि. विद्युत् आदि के द्वारा हम अपनी सब विध सुरक्षा के उपाय करें. जिस से हमारी शान्ति सदा स्थिर रहे। हे वरणीय देव। आप के रचे मित्र और वरुण अर्थात् अग्नि और वायु के माध्यम से हम समस्त ऐश्वर्यों को प्राप्त करें। इन के संयोग से हम अपने यान्त्रिक उद्योगों का संचालन भली प्रकार कर सकें तथा शरीर रूपी यंत्र को भी ठीक रख सकें। हे सुखदाता प्रभो ! आप की सूर्य रूप ताप शक्ति और चन्द्रमा रूप सोम शक्ति से हम अपने सुखों का विस्तार करें। शीतलता और ऊष्णता को हम नियंत्रित कर सकें। हे पोषण कर्ता प्रभो ! हम अपनी शान्ति कें लिए आप द्वारा रचे सूर्य और मेघ को नियंत्रित कर सकें जिस से नाना प्रकार के उत्तम अन्नादि पुष्टि दायक भोग्य पदार्थों को हम प्राप्त कर सकें। इस प्रकार हमें सबविध शान्ति प्राप्त हो।

शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु. शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः। शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु। — ऋक्० ७।३५।२

हे परम ऐश्वर्यं शाली देव ! आप की अनुकंपा से हम सुख शान्ति से परिपूर्ण ऐश्वर्य को प्राप्त करें। हम निश्चय से ऐसी शिक्षा व ज्ञान को ग्रहण करें जो हमारे लिए सुखकारी हो। हे पिता ! आप हमें ऐसी प्रगतिशील मेधा बुद्धि प्रदान कीजिए जो हमें सदा उत्तम शान्ति प्रदान करती रहे। ईर्ष्या. द्वेष. घृणा. निन्दा. से दूर रखे। निश्चय पूर्वक हम उस धन संपत्ति को प्राप्त करें जो हमें सुख व शान्ति को देने वाली हो। हे सत्य मार्ग के प्रेरक प्रभो ! हम उत्तम प्रकार से यमों और नियमों का पालन करते हुए सदा प्रशंसित हों और उत्तम सुख. शान्ति पूर्ण दीर्घ आयु एवं कल्याण को प्राप्त कर सकें।

शं नो धाता शमु धर्ता नो अस्तु. शं न उरूची भवतु स्वधाभिः। शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः. शं नो देवानां सुहवानि सन्तु। – ऋक्० ७।३५।३

हे देव प्रभो ! आपकी रची यह धरती जो हमारा धारण. पोषण करती है. हमारे लिए सदा सुखदायी बनी रहे। इस धरती को धारण करने वाला सूर्य हमारे लिए शान्ति दायक हो। ये विस्तृत आकाश में फैले मेघ हमारे लिए सुख की वर्षा करें। यह त्रिलोकी जो द्युलोक से पृथिवी लोक तक विशाल रूप में फैली हुई है. हमारे लिए अत्यन्त सुख देने वाली हो। वसुंधरा पर जहाँ जहाँ पर्वत खड़े हैं वे हमारे लिए सुख का विस्तार करें। दिव्य पुरुषों द्वारा किए जाने वाले यज्ञ और

उनके द्वारा की जाने वाली स्तुतियाँ और उनके उपदेश हमारे लिए अत्यन्त हितकारी व सुख शान्ति के वर्धक हों।

शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु. शं नो मित्रा-वरुणा वश्विना शम्। शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु. शं न इषिरो अभि वातु वातः।

— ऋक्० ७।३५।४

हे प्रकाश स्वरूप देव ! आप की बनाई इन अग्नियों का जो प्रकाश है उन की किरणें और उनका बल सामर्थ्य हमारे लिए सुख शान्ति दायक हो। दिव्य प्राण और उदान रूप शक्तियाँ हमारे लिए सुखदायी बनी रहें। आपकी युग्म रूप शक्तियाँ सूर्य और चन्द्रादि हमारे लिए सुखकारी हों। हमारे द्वारा किए गए और भविष्य में किए जाने वाले उत्तम कर्म हम में सुख और शान्ति के बढ़ाने वाले हों। अपनी उत्तम गति से वहने वाला शीतल समीरण [वायु] सदा हमारे चारों ओर बहता रहे। हम अपने जीवन में सदा सुखों व आनन्द से परिपूर्ण रहें।

शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ. शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु। शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु. शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः।

—ऋक० ७।३५।५

हे सर्व प्रथम स्मरणं करने योग्य प्रभो ! आप के द्वारा प्रथम बनाए गए द्युलोक और पृथिवी लोक तथा इन दोनों के

वनने के वाद निर्मित अन्तरिक्ष लोक जो हमारे देखने का कारण भी है [क्यों कि केवल आँख और प्रकाश से ही हम नहीं देखते। देखने के लिए अन्तरिक्ष,-खाली स्थान की भी आवश्यकता अनिवार्य है] इस प्रकार आप की त्रिलोकी. जो अत्यन्त दर्शनीय भी है. हमारे लिए उत्तम सुख शान्ति देनें वाली हो। हे प्रभो! आप द्वारा उत्पन्न की गई वनौषधियाँ हमारी शारीरिक व्याधियों को दूर कर सुख की वृद्धि में सहायक वनें। इस त्रिलोकी को अपने प्रकाश से प्रकाशित करने वाला प्रकाशपति सूर्य सदा हमारे लिए सुखकारी व शान्तिकर हो।

शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु. शमादित्येभिर् वरुणः सुशंसः। शं नो रुद्रोरुद्रेभिर्जलाषः. शं नस् त्वष्टाग्नाभिरिह श्रृणोतु। —ऋक्० ७।३५।६

हे परम ऐश्वर्य युक्त देव! आप की अनुकम्पा से आप का वनाया सूत्रात्मा वायु आठ वसुओं के द्वारा दिव्य गुण युक्त होकर हमें सुख शान्ति प्रदान करने वाला है पृथिवी. जल. अग्नि. वायु. आकाश. चन्द्र. नक्षत्र और सूर्य ये आठ वसु कहलाते हैं] हे शान्ति का दान करने वाले देव! यह वरुण अर्थात् सूक्ष्म जल कण, बारह आदित्यों के साथ प्रशंसनीय होकर हमें शान्ति प्रदान करते रहें। बारह. मास वारह आदित्य अर्थात् अदिति के पुत्र कहाते हैं ये सूर्य की सन्तान हैं। जल कण ऋतुओं को सुहावना बनाते हैं अर्थात् हर दिन हमारे लिए सुहावना और आनन्द दायी हो। हे न्याय कर्ता प्रभो! आप

ग्यारह रुद्रों के द्वारा हमारे दोषों व दु:खों का निवारण करते हो। दश प्राण और ग्यारहवाँ जीवात्मा रुद्र कहाते हैं। आप के यह रुद्र भी निरुपद्रवी रहें। हे त्वष्टा प्रभो ! आप अपने उत्तम ज्ञान व अपनी सोलह कलाओं से हमें सुख प्रदान कीजिए। हे त्वष्टा ! हमारी इस प्रार्थना को आप सुनिए और और स्वीकार कीजिए।

शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं. नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः। शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु. शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः। -ऋक् ७।३५।७

हे अगाध शान्ति के भण्डार तथा चराचर जगत् के प्रणेता प्रभो ! इस सृष्टि के जिस जिस पदार्थ में उत्पादन की क्षमता है वह क्षमता रूप सोम शक्ति हमें सब विध सौख्य प्रदान करे। ब्रह्म अर्थात् ब्रह्माण्ड में व्याप्त सोम शक्ति हमें शान्ति व सुख प्रदान करे। इस उत्पादन रूपी सोम शक्ति के जितने साधन हैं वे भी हमें परम शान्ति प्रदान करें। इस प्रकार निर्माण और संहार के नियमों से बँधे हुए जो विविध प्रकार के यज्ञ हैं वे हमारे लिए हितकारी हों। इन विविध यज्ञों के जो साधन उपकरण हैं वे भी हमारे लिए सुखदायी हों। हे प्रकृष्ट सुखों के देनेहारे देव ! आप की यह जो सृष्टि रूप यज्ञ शाला है वह हमारे लिए अत्यन्त सुखों को देनेहारी हो।

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु. शं नश्चतस्र प्रदिशो भवन्तु। शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु. शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः। -ऋक्० ७।३५।८

हे सहस्राक्ष प्रभो ! आप का यह उदय और अस्त होता हुआ सहस्र किरणों वाला अर्थात् वहुत सी आँखों वाला यह सूर्य हमें सब विध सौख्य प्रदान करे। आप के द्वारा बनाई यह चारों ओर स्थित दिशाएँ. प्रदिशाएँ हमें नाना विध सुख शान्ति प्रदान करें। अपने स्थान पर स्थित ये पर्वत सदा अचल रहते हुए हमारे सुख को बढ़ानेहारे हों। कूप. तालाब. निर्झर. नदियाँ और समुद्र का स्वच्छ जल हमारे लिए सुख शान्ति और आनंद का देने वाला बने।

शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः. शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः। शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु. शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः। – ऋक्० ७।३५।९

हे व्रतपति ! अपने नियमों पर सदा अटल रहने वाले प्रभो ? आपके द्वारा निर्मित यह अनुशासन व नियमों का पालन कर्ता सूर्य अपने व्रतों और नियमों द्वारा हमारे लिए प्रेरक व शान्तिदायक बने। सुख की वर्षा करने वाले सुखों से भरपूर मरुद्गण हमारे लिए सदा सुखदायी हों। आपके द्वारा बनाई गई विष्णु रूप सूर्य की पोषण करने वाली उत्तम पुष्टियों से हम बलशाली बनें। हमारे जीवन की रक्षा करने वाला यह वायु हमारे लिए सुख व शान्ति का निर्माण करे।

शं नो देवः सविता त्रायमाणः. शं नो भवन्तूषसो विभाती। शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः. शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शंभुः। ऋक्० ७।३५।१०

हे सकल जगत् के उत्पत्ति कर्ता तथा रक्षक देव ! आप का बनाया यह सूर्य सब विध हमारी रक्षा करता हुआ उषा-काल में अपने विशिष्ट प्रकाश से हमारे लिए सुखदायी हो। समस्त प्राणी मात्र के लिए पानी देने वाले मेघ समय पर जल बरसा कर धरती माता को तृप्त करते रहें। हमारी इस धरती का स्वामी सूर्य हर प्रकार से हमें सुख शान्ति व आनन्द का देने वाला बनकर हम सब का कल्याण करे।

शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु. शं सरस्वती सह धीभिरस्तु। शमभिषाचः शमु रातिषाचः. शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः । ऋक्० ७।३५।११

हे देवों के देव विश्वदेव प्रभो ! आप के रचे इस ब्रह्माण्ड के बत्तीस जड़ देव तथा तेतीसवाँ चेतन आत्मा इस प्रकार तेंतीस कोटि [प्रकार] के देव अपनी दिव्यताओं से सुख शान्ति को बिखेरने वाले बने रहें। आप की दी हुई ज्ञान रस से परि-पूर्ण वेद वाणी बुद्धियों के सामर्थ्य को बढ़ा कर नाना प्रकार के सुख आनन्द को प्राप्त करती रहे। हे देव ! इस सृष्टि का जन साधारण तथा विशेष प्रतिभा से युक्त विशिष्ट जन दोनों भी हमारे लिए सुख शान्ति के देने वाले हों। आप के पृथ्वी लोक की दिव्य शक्तियाँ और इस से इतर सर्वत्र व्यापिनी दिव्यताएँ हमारे लिए सब विध सुखकारी हों।

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु. शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः। शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्तः. शं नो भवन्तु पितरो हवेषु। —ऋक्० ७।३५।१२

हे अत्यन्त सुखों को देने हारे सुखपति देव ! हम सुख और शान्ति की प्राप्ति के लिए सत्य के स्वामी वनें। हम सुख और शान्ति की प्राप्ति के लिए उत्तम दूध देने हारी गौ तथा वाहन के योग्य बैल. घोडे. ऊँट आदि पशुओं तथा उत्तमोत्तम यांत्रिक वाहनों के स्वामी बनें। हे देव ! अपने दक्ष हाथों से ज्ञान पूर्वक उत्तम कार्य करने वाले शिल्पकार. इंजीनियर. वैज्ञानिक आदि हमारे लिए सुख शान्ति का विस्तार करने वाले हों। वयोवृद्ध ज्ञानी. पितर गण. विद्वान. साधु. सन्यासी हमारे लिए सुख शान्ति और कल्याण का मार्ग प्रशस्त करें।

शं नो अज एक पाद् देवो अस्तु. शं नोऽहिर्बुध्न्यः
शं समुद्रः । शं नो अपां नपात् पेरुरस्तु. शं नः
पृश्निर्भवतु देवगोपा । ऋक्० ७।३५।१३

हे दिव्य गुण युक्त देव ! आप का वनाया यह प्रकाशमान् द्युलोक हमारे लिए सुखकारी हो। जलीय कणों से परिपूर्ण अन्तरिक्ष लोक सबके लिए शान्तिदायी हो। अन्तरिक्ष की पुत्री विद्युत् हमारी कामनाओं को पूर्ण करनेहारी हो। दिव्यताओं की रक्षा करने वाली. देवों का पालन पोषण करने हारी पृथिवी हमारे लिए अत्यन्त कल्याण कारिणी हो।

इन्द्रो विश्वस्य राजति। शं नो अस्तु. द्विपदे शं
चतुष्पदे । -यजु० ३६।८

हे परमेश्वर्यशाली इन्द्र रूप प्रभो ! आप का ऐश्वर्य सारे विश्व में बिखरा पड़ा है। सृष्टि के कण-कण में प्रकाशित हो

रहा है। यह एश्वर्य दो पैर वाले और बहुत पैर वालों के लिए भी सुख शान्ति और कल्याण का देने वाला हो।

शं नो वातः पवताङ् २ शं नस्तपतु सूर्यः। शं नः कनिक्रदद् देवः. पर्जन्यो अभि वर्षतु। –यजु० ३६।१०

हे अनन्त सुखवर्षक प्रभो ! अन्तरिक्ष में बहता हुआ यह वायु हमें शान्ति प्रदान करे। देदीप्यमान ताप धर्मा सूर्य हमारे लिए हितकारी होवे। आकाश को अपनी गड़गड़ाहट से गुञ्जायमान करते हुए ये दिव्यगुण युक्त मेघ हम पर चारों ओर से सुख शान्ति और कल्याण की वर्षा करें।

अहानि शं भवन्तु नः शङ रात्रिः प्रति धीयताम्। शं न इन्द्राग्नि भवतामवोभि श न इन्द्रावरुणा रातहव्या। शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ. शमिन्द्रा. सोमा सुविताय शं योः। –यजु० ३६।११

हे कृपा निधान ! सब दिन हमारे लिए सुखकर होवें और रात्रियाँ भी और अधिक सुख. शान्ति को धारण किए हों। सौर शक्ति द आग्नेय शक्तियाँ रक्षा के साधनों द्वारा हमें शान्ति प्रदान करें। सूर्य और वायु अपने ऐश्वर्य द्वारा हमें सुखी रखें। सूर्य और पृथ्वी अन्नादि के द्वारा हमें शान्ति प्रदान करें। सूर्य और जल उत्तम वनस्पतियों के द्वारा हमारे सुख का विस्तार करें।

शं नो देवी रभिष्टय. आपो भवन्तु पीतये। शं योरभि स्रवन्तु नः। –यजु० ३६।१२

हे दिव्य गुणों से युक्त देव ! आप की दिव्यताएँ चारों ओर व्याप रही हैं। ये आप की चतुर्दिक् व्याप्त दिव्य शक्तियाँ हमें इष्ट सुख और शान्ति का पान कराती रहें। हे पिता ! हम पर चारों ओर से सर्वदा सुख शान्ति और कल्याण बरसता रहे।

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षङ् शान्तिः. पृथिवी शान्ति-रापः शान्ति. रोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्. विश्वे देवाः शान्तिर्. ब्रह्म शान्तिः. सर्वङ शान्तिः. शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि। – यजु० ३६।१७

हे शान्ति के देने हारे शान्तिमान् प्रभो ! आप का यह द्युलोक हम पर शान्ति की वर्षा करे। यह अन्तरिक्ष लोक सुख की वर्षा करे पृथिवी लोक हमारा कल्याण करे। समुद्र हमें शान्ति प्रदान करने वाले हों। औषधियां हमारे लिए हितकारी हों। वनस्पतियाँ हमें शान्ति प्रदान करें। आप के यह तेतीसों देव हमारे लिए सुख शान्ति के देने हारे हों। आप का निखिल ब्रह्माण्ड हमें सुख शान्ति देने वाला हो। हमारा सर्वस्व सुख शान्ति से परिपूर्ण हो। चहुँ दिक् सुख और शान्ति का वास हो। उस शान्ति को आप मेरे भीतर निरन्तर बढ़ाते रहिए।

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं. जीवेम शरदः शतङ्. शृणुयाम शरदः शतं. प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं. भूयश्च शरदः शतात्। यजु० ३६।२४

हे दिव्य द्रष्टा तथा अत्यन्त दर्शनीय देव ! आप अत्यन्त हितकारी दिव्य गुणों से युक्त अत्यन्त पवित्र शक्ति को धारण किए हो। जो उत्कृष्टता से आप की उपासना करता है उसको आन्तरिक प्रेरणा प्रदान कर आप प्रगति पथ पर आगे बढ़ाते हो। इस मंगल पथ पर चल कर हम सौ शरद् ऋतुओं तक भद्र ही देखें। सौ शरद ऋतुओं तक सुख पूर्वक जीवन यापन करें। सौ शरद ऋतुओं तक भद्र ही सुनते रहें। सौ शरद् ऋतुओं तक उत्कृष्ट ज्ञान युक्त मधुर वाणी ही बोलते रहें। सौ शरद् ऋतुओं तक स्वाधीन हो कर सुखी रहें। आप की कृपा से सौ शरद् ऋतुओं से अधिक आयु को भी प्राप्त कर सकें।

सृष्टि क्रम से शरद् ऋतु अन्तिम ऋतु है। शरद् के अन्त में सूर्य उत्तरायण में गमन करता है। मनुष्य की स्वाभाविक मृत्यु शरद् ऋतु के बाद ही होनी चाहिए।

निशा स्मरण मन्त्र–

निम्न लिखित शिव संकल्प के छः मंत्रों का पाठ सोने से पूर्व भी अवश्य किया करें।

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं. तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु।

यजु० ३४।१

हे मनस्वी ! मनस्तत्व के व्याप्त करानें हारे देव ! मेरा यह मन जागृत अवस्था में जिस प्रकार दूर दूर जाता है वैसे ही सो जाने पर भी सदा गति शील रहता है। दूर गमन

करना इस का स्वभाव ही है। यह मन संसार की दिव्य ज्योतियों में अपने ढंग की एक ही ज्योति है। यही मन अग्नि तत्व से संपृक्त होकर समस्त ज्ञान को ज्ञानेन्द्रियों से ग्रहण कर आत्मा को अनुभूत करानें का साधन भूत है। ऐसा मेरा मन आप के अनुग्रह से सदा उत्तम श्रेष्ठ संकल्पों व विचारों वाला हो।

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो. यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः। यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां. तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु। —यजु० ३४।२

हे अत्यन्त गति शील दिव्य गुण युक्त देव! मेरा मन वायु तत्व से संपृक्त होकर ही हमें कर्मों में प्रवृत्त कराता है। मनस्वी धैर्यशील विद्वान् इसी के सहाय से श्रेष्ठतम यज्ञ रूप कर्मों में प्रवृत्त होते हैं। अपूर्व संकल्प शक्ति को मनुष्यों के भीतर धारण किया हुआ यह मन सदा उत्तम कल्याणकारी विचारों से परिपूर्ण रहे।

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च. यज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु। यस्मान्न ऋते किंचन कर्म क्रियते. तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु। —यजु० ३४।३

हे अनन्त ज्ञान के देने हारे प्रभो! मेरा यह मन जो चेतना और प्रकृष्ट ज्ञान प्राप्ति का साधन है। ज्ञान को धारण करने की क्षमता से युक्त है। जो प्रजाओं की आत्मा में ज्योति स्वरूप है। जो कभी नष्ट नहीं होता. मरता नहीं है। जिसके

बिना आत्मा कुछ भी कर्म नहीं कर सकता। ऐसा मेरा मन सदा उत्कृष्ट विचारों से ओत प्रोत रहे।

येनेदं भूतं भुनं भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम्। येन यज्ञस्तायते सप्तहोता. तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु। यजु० ३४।४

हे तीनों कालों में वर्तमान. काल के विभाग से रहित परमेश्वर ! आप के अनुग्रह से यह मेरा मन जिस के द्वारा भूत काल. वर्तमान काल और भविष्य काल के भेद को भली प्रकार ग्रहण करता है। उसी के द्वारा सब कुछ ग्रहण किया जाता है जो आत्मा के साथ सदा तीनों कालों में अमृत रूप रहता है यही मन मनुष्यों के कर्मों को विस्तार देता है। भूः भुवः स्वः महः जनः तपः सत्यम् रूप सप्त चक्रों से चलने वाले इस जीवन यज्ञ का मुख्य साधन भूत है वह मेरा मन उत्तम शिव संकल्पों से सदा आपूरित रहे।

यस्मिन् ऋचः साम यजूङ्२षि. यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवारा। यस्मिंश्चित्तङ् सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिव शंकल्पमस्तु यजु० ३४।५

हे स्तुति प्रार्थना और उपासना के योग्य प्रिय देव ! जिस मेरे मन में ज्ञान रूप स्तुति कर्म और पुरुषार्थ रूपी प्रार्थना और सत्य में धारणा रूप उत्तम श्रद्धामयी उपासना है। जिस के प्रकाशक ऋक्. यजु. और साम वेद हैं। इन समस्त ज्ञान रूप रश्मियों का तथा समस्त ज्ञान कर्म उपासना की ज्ञान चेतना

का जो केन्द्र है। जैसे रथ के गोलाकार पहियों के मध्य का जो केन्द्र है जिस में सारे खण्डों की स्थिति होती है वैसे ही यह मन समस्त ज्ञान कर्म. उपासना रश्मियों का मुख्य केन्द्र है इसी में हमारा समस्त सामर्थ्य प्रतिष्ठित है और जिस में मनुष्यों की चेतना शक्ति ओत प्रोत है ऐसा मेरा मन सदा शुद्ध ज्ञान और पवित्र विचारों से अभिभूत रहे।

सुषारथिरश्वानिव यन् मनुष्यान् नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव। हृत्प्रतिष्ठं. यदजिरं. जविष्ठं. तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु। –यजु० ३४'६

हे मेरे जीवन के अन्तः प्रेरक प्रभो! मैं अपने मन को सुसारथी अर्थात् कुशल रथ वाहक जिस प्रकार समस्त कला यन्त्रों पर अपना नियंत्रण सदा स्थिर रखता है जैसे सारथी घोडे को लगाम द्वारा नियन्त्रित रखता है वैसे ही मेरी आत्मा अपने शिव संकल्प युक्त मन से इन्द्रियो को नियंत्रित रखे। क्योंकि यही मन मनुष्यों को भले बुरे मार्गों में प्रवृत्त करता है मेरी आत्मा हृच्चक्र में स्थित है।

आन्मा एक देशी है किन्तु उस की मन रूपी यह शक्ति आत्मा से सर्वदा संयुक्त रहती हुई भी दूर दूर तक गमनं करती है। यह मन सदा युवा रहता हैं। यह आत्मा के साथ सदा वर्तमान अजर अमर है। इस की गति समस्त गतियों में तीव्र है ऐसा मेरा मन सदा श्रेष्ठ विचारें से परिपूर्ण रहे। इसमें कभी कोई दुःखदायी अभद्र विचार आ ही न सके।

स १ नः २ पवस्व ३ शं २ गवे ३ शं १ जना २ य ३ श १ मर्व २ ते। शं १ रा २ ज ३ न्नो १ ष २ धीभ्यः ।

—साम० उ० १।१।१

हे सर्व विध सब की रक्षा करने वाले प्रभो ! आप हमें सब विध पवित्र कर दीजिए। हमारी कर्मेन्द्रियों में तृप्तिरूप शान्ति की स्थापना कीजिए। जितने भी प्राणीभूत देह धारी जीव हैं उन्हें शान्ति प्रदान कीजिए। सब की गति में. हर क्रिया में तथा मनुष्यों के मन में सदा शान्ति रहे अर्थात् गति में सदा सन्तुलन बना रहे। अपनी शान्तिदायिनी वह शक्ति अन्न औषधि और वनस्पति में भी प्रकाशित हो अर्थात् भोग्य और भोक्ता दोनों शान्ति और तृप्ति देने वाले हों।

अभय नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावा पृथिवी उभे इमे। अभयं पश्चादभयं पुरस्ता. दुत्तरादधरादभयं नो अस्तु।

—अथर्व० १९।१५।५

हे सर्व शक्तिमान् देव ! आप हम पर ऐसी अनुकंपा कीजिए कि हम सदा सब ओर से सब विध भय रहित हो जायँ। यह अन्तरिक्ष लोक हमारे लिए भय रहित रहे। द्युलोक और पृथिवी लोक ये दोनों भी हमारे लिए सदा भय रहित रहें। हमारे पीछे की दिशा प्रदिशायें हमारे आगे की दिशा प्रदिशायें हमारे लिए सदा भय रहित हों। हमारी ऊपर की और नीचे की दिशा से भी हमें कभी भय की प्राप्ति न हो

आप इन्हें सदा शान्त रखिए जिस से हम भय रहित जीवन विता सकें हमारे लिए आप सव विध अभय का दान दीजिए।

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्। अभयं नक्तमभयं दिवा नः, सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु।

—अथर्व० १९।१५।६

हे सर्वान्तर्यामिन् हे हमारे चिर सखा प्रभो ! हम सदा अपने मित्रों से भय रहित रहें। कोई मित्र रूप में भी हमें हानि न पहुँचा सके जो हम से वैर रखते हैं हमारे अमित्र हैं वे भी हमें कभी हानि न पहुँचा सकें। ज्ञात तथा अज्ञात आपदाओं से भी हमें कोई भय न रहे। रात्रि के गहन अन्धकार में तथा सूर्य प्रकाश में भी हमें कोई भय नहीं रहे। यह तभी संभव हो सकेगा जब आप हमारे मित्र हो जाँय। हम आप की मित्रता के पात्र बन सकें। जब आप हमारी मित्रता को स्वीकार करेंगे तब तो सारी दिशाएँ हमारी मित्र बन जायेंगी और हम सर्वथा अभय हो जायेंगे। हम अपने श्रेष्ठ आचरण श्रेष्ठ व्यवहार और ऋजुनीति से सभी को अपना मित्र बनाते चलें।

—इति शान्ति करणम्

शान्ति के प्रकार

शान्ति तीन प्रकार की होती है। एक आध्यात्मिक दूसरी आधिभौतिक और तीसरी आधिदैविक। इन मंत्रों में तीनों प्रकार की शान्ति की प्रार्थना की गई है।

— अथ बृहद् यज्ञः

यज्ञ हमारे भौतिक सुखों की प्राप्ति का मूल है। यज्ञ परोपकार का श्रेष्ठ साधन है यज्ञ प्रक्रिया किसी मत सम्प्रदाय से सर्वथा ऊपर मित्र अमित्र की भावना से रहित प्राणिमात्र के लिए अत्यन्त हितकारी है। सन्ध्या से हमारी आत्मा के दोषों की निवृत्ति होती है और यज्ञ से जड़ प्रकृति के प्रदूषण नष्ट होते हैं। सन्ध्या व्यक्तिगत जीवन को सँवारती है और यज्ञ सामाजिक जीवन को सँवारता है।

यज्ञ में शुद्ध गाय के घी का प्रयोग आवश्यक है। इस से अनन्त लाभ होते हैं और गाय का पालन भी होता हैं यज्ञ में शुद्ध शास्त्रोक्त विधि से बनी हुई सामग्री का प्रयोग करना चाहिए। आज के वैज्ञानिक जल वायु प्रदूषण से चिन्तित हैं और इस जलवायु के प्रदूषण से बचने का एक मात्र उपाय है यज्ञ। यज्ञ में समिधा भी उत्तम आम्र पलाश पीपल आदि वृक्षों की प्रयुक्त करनी चाहिए। ऐसी समिधा व वनस्पतियों से न केवल जल-वायु की शुद्धि होती है अपितु नाना प्रकार के रोगों का निवारण होकर समाज में सुख की वृद्धि होती है। प्रत्येक मन्दिर में अथवा सार्वजनिक स्थल पर यज्ञशाला अवश्य बनाई जानी चाहिए। देवालय शब्द का अर्थ यज्ञशाला ही होता है।

— यज्ञ के प्रभाव का प्रत्यक्ष प्रमाण

कपास या कपडे के जलने से बहुत दूर तक दुर्गन्ध फैलती है परन्तु जब इसी कपास को घी में डुबाकर जलाया जाता है तो दुर्गन्ध का नामो निशान नहीं रहना। इससे सिद्ध होता है कि घी में दुर्गन्ध नष्ट करने का अद्भुत सामर्थ्य है।

आधुनिक युग में प्रायः शिक्षित व्यक्ति यह कहते सुने जाते हैं कि घी को जलाने की अपेक्षा खाना अधिक हितकारी है किन्तु वे नहीं जानते

कि घी के खाने से जितना लाभ एक व्यक्ति को पहुँचता है उससे हजार गुना लाभ उतने ही घी को जलाने से होता है। अग्नि से संयुक्त हो कर घृत की शक्ति सूक्ष्म होकर बढ़ जाती है और वह वायु के साथ मिलकर हमें नीरोग रखने का अद्भुत कार्य करता हैं। यज्ञ के मंत्रों में सृष्टि विज्ञान. गृहस्थ विज्ञान. एवं नानाविध विद्याएँ भरी पडी हैं जिन्हें विज्ञ जन ही जान सकते है।

—आचमन मत्र

वाएँ हाथ में आचमन पात्र अथवा चमच से सीधे हाथ की अञ्जली में थोड़ासा जल लें और नीचे लिखे मंत्रों को पढ़कर एक एक आचमन तीन वार करें —

ओ३म् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा।
ओ३म् अमृतापिधानमसि स्वाहा।
ओ३म् सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः
श्रयतां स्वाहा। तैति० प्र. १० अ. ३२-३५

मैं सत्य रूपी अमृत का पान कर सत्य ज्ञानी वनूँ। ज्ञान ही मेरा आधार अर्थात् बिछावन है।

मैं यश रूपी अमृत का पान करूँ यशस्वी वनूँ। सदा यश से ही आच्छादित रहूँ।

अपने जीवन में सत्य यश और श्री निरन्तर बढ़ाता रहूँ।

प्रत्येक आर्य पुरुष यज्ञ के आरंभ में तीन आचमन करके शुभ संकल्प करता है और परमात्मा से प्रार्थना करता है कि हमारे व्यक्तिगत जीवन में तथा सामाजिक जीवन में सत्य यश और श्री की वृद्धि हो।

व्यक्तिगत व सामाजिक जीवन की उन्नति के लिए आवश्यक है कि हम अपने जीवन का एक कार्यक्रम सुनिश्चित योजना बना कर जिएँ और अपनी योग्यतानुसार समाज सेवा का व्रत लें। जीवन के सुनिश्चित कार्यक्रम का नाम है आश्रम व्यवस्था तथा योग्यता के अनुसार सामाजिक सेवा के व्रत का ही नाम है वर्ण व्यवस्था।

जीवन के तीन अमृत हैं - सत्य, यश और श्री। श्री का अर्थ है सात्त्विकी वृद्धि तथा ईमानदारी से कमाया धन। सत्य की प्राप्ति ज्ञान से होती है और ज्ञान प्राप्ति का काल ही ब्रह्मचर्य आश्रम कहाता है। समाज में इसी ज्ञान की सत्य की रक्षा का दायित्व ब्राह्मण का है। यश की प्राप्ति होती है श्रेष्ठ कर्मों से। कार्य क्षेत्र का ही दूसरा नाम है गृहस्थ आश्रम। जहाँ उत्तम कर्म व उत्तम निर्माण द्वारा मनुष्य यश अर्जित करता है। सामाजिक रूप में यश की रक्षा का दायित्व क्षत्रिय का है। जो समाज व राष्ट्र के यश की रक्षा करता है वह क्षत्रिय कहाता है।

आध्यात्मिक पक्ष में श्री का अर्थ है कान्ति व ऋतंभरा प्रज्ञा जो परमात्मा की विशेष भक्ति से उपलब्ध होती है। इसी की साधना के काल को वानप्रस्थ आश्रम कहा जाता है। सामाजिक क्षेत्र में श्री का अभिप्राय है उत्तम साधनों से अर्जित धन। इस धन की रक्षा व वृद्धि करनेवाला वैश्य कहाता है।

इन तीनों मर्यादाओं का पालन करने के लिए संकल्प के रूप में तीन आचमन किए जाते हैं। इस व्यवस्था को जीवित रखना ही अमृत पान है।

एक एक अंग का स्पर्श करके परमात्मा से उत्तम स्वास्थ्य की कामना करनी है और प्रत्येक अंग को उत्तम कर्मों में प्रवृत्त रखने का निश्चय दोहराना है।

सीधे हाथ से बाईं हथेली में जल लेकर सीधे हाथ की मध्यमा और अनामिका अंगुली से जल का स्पर्श कर एक एक अंग को लगाएँ –

ओ३म् वाङ्म आस्येऽस्तु ।

इस से ओठों के दोनों किनारों का स्पर्श

ओ३म् नसोर्मे प्राणोऽस्तु ।

इससे नासिका के दोनों छिद्रों का स्पर्श

ओ३म् अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु ।

दोनों आँखों की कोरों पर

ओ३म् कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु । दोनों कानों पर

ओ३म् बाह्वोर्मे बलमस्तु ।

दोनों बाहुओं या कन्धे पर

ओ३म् ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु ।

दोनों पैरों के घुटनों पर

ओ३म् अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु ।

–पार० २.३.२५

शेष जल को पूरे शरीर पर छिटका दें

हे प्रभो ! मेरे मुख में बोलने की शक्ति. नासिका में घ्राण व प्राण शक्ति. नेत्रों में देखने की. कानों में सुनने की. भुजाओं में कार्य करने की शक्ति व पैरो में गति शीलता जीवन भर बनी रहे ।

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । —गोभिल० १।१।११

इस मंत्रको कह कर घृत दीप प्रज्वलित करे।

ओ३म् ! हे रक्षक प्रभो !

भुः – हे प्रभु ! हम पृथिवी के गर्भ में तथा ऊपर जलने वाली अग्नि के रहस्यों को जान कर. उस के समुचित उपयोग द्वारा पूर्ण लाभ प्राप्त कर अपने प्राणों को पुष्ट बनाएँ।

भुवः – अन्तरिक्ष लोक में निवास करने वाली विद्युत रूप अग्नि को प्राप्त कर उसके रहस्यों को जान. उस से नाना प्रकार के उपयोग द्वारा समाज के दु:खों को अभावों को दूर करें।

स्वः – हे प्रभो ! द्युलोक में स्थित आप की सौर शक्ति को प्राप्त कर नाना प्रकार से प्राणी मात्र को सुख पहुँचाते रहें।

एक चमच में कपूर लेकर उसे घृत दीप से प्रज्वलित करें और यज्ञकुण्ड के भींतर रखी हुई खोवरे की सूखी गिरी में निम्न मंत्र को पूरा पढ़ लेने के बाद यजमान और यजमान की पत्नी अपने स्थान पर खडे होकर यज्ञकुण्ड में अग्नि का आधान करें। तत्पश्चात् सब विद्वान. विश्वेदेवा और यजमान सब अपने स्थान पर खडे रहें। प्रथम अग्न्याधान करें फिर हाथ जोड़ कर यज्ञ को सफल बनाने का परस्पर निवेदन करें और प्रभु से प्रार्थना करें कि वह हमारे इस यज्ञ कार्य को निर्विघ्न पूर्ण करें।

—अग्न्याधान मन्त्र

ओ३म् भूर्भुवः स्वर् द्यौरिव भूम्ना. पृथिवीव वरिम्णा। तस्यास्ते पृथिवि देव यजनि. पृष्ठेऽग्नि मन्नादमन्नाद्यायादधे। —यजु० ३।५

हे प्रभो ! मैं भूलोक अन्तरिक्ष लोक और द्युलोक में स्थित तीनों प्रकार की अग्नियों की प्राप्ति के लिए यह यज्ञ कर रहा हूँ। जिस प्रकार द्युलोक में ज्योतिर्मान् सूर्य जगमगा रहा हैं इसी प्रकार अत्यन्त महिमा युक्त भूमि के द्वारा वरण की गई वरणीय अग्नि को देवताओं से निरन्तर यज्ञ से देदीप्यमान की जानी वाली पृथिवी की पीठ पर आप की अग्नि को आहवनीय पदार्थों को खिलाने तथा उस से उत्तम भोग्य पदार्थों की प्राप्ति के लिए आज यहाँ धरता हूँ। आप हमारे इस यज्ञ की रक्षा कीजिए.

तीनों प्रकार की अग्नियों से जितने भी परोपकार के कार्य किए जाते हैं वे सब यज्ञ रूप हैं। उनके फल कार्य के परिणामानुसार न्यूनाधिक्य है किन्तु यह यज्ञ सर्व श्रेष्ठ है जो जीवन के मौलिक तत्त्वों का शोधन कर यन्त्रों से होने वाली हानि से रक्षा करता है।

प्रत्येक फैक्ट्री. कल. कारखानों में जहां वायु प्रदूषण होता है उस उस स्थान में उसी परिणाम में बड़े बड़े यज्ञ भी निरन्तर कराए जाने चाहिए।

– अग्नि प्रबोधन मन्त्र

ओ३म् उद् बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि. त्वमिष्टा पूर्त्ते सङ्ग सृजेथामयं च । अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन्. विश्वे देवा यजमानश्च सीदत । – यजु० १ ।५४

हमारे प्रिय प्रभो ! इस यज्ञकुण्ड में रखी गई अग्नि को और साथ ही मेरे भीतर की अग्नि को उत्कृष्टता से प्रकाशित कीजिए देदीप्यमान कीजिए. इसे धधका दीजिएं । इस से जो भी उत्पादन होगा उससे हमारे अभीष्ट की पूर्ति हो। इष्टापूर्ति के लिए आप सम्यक् तया इस इस यज्ञ की संसृष्टि कीजिए ।

हे प्रभो ! इस यज्ञ संसद में उत्तराभिमुख हो वेदवित् विद्वान् बैठें और शेष व्यक्ति यज्ञ के चारों ओर बैठ जाँय ।"

इस मंत्र के पूर्ण उच्चारण के साथ सब व्यक्ति अपने अपने स्थान पर विराजमान हों ।

– समिदाधान मन्त्र

तीन समिधाएँ क्रमशः भूलोक अन्तरिक्षलोक तथा द्युलोक के नाम से अग्नि को समर्पित करें –

प्रथम भूलोक के लिए –

ओ३म् अयंत इध्म आत्मा जातवेदस्. तेनेध्यस्व. वर्धस्व. चेद्ध. वर्धय. चास्मान्. प्रजया. पशुभिर्. ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसेइदं न मम । – आश्वला० १।१०।१२

हे प्रभो ! यह जातवेदस् ज्ञान पूर्वक प्रज्ज्वलित की हुई अग्नि मेरी इस यज्ञ की आत्मा है। इस यज्ञ के द्वारा हम उत्तम सन्तान रूप प्रजा का निर्माण करें। जिस से वंश, कुल, राष्ट्र और धरती प्रकाशित हो उठे। इस यज्ञ के द्वारा हम उत्तम वाहन के योग्य पशु बैल, घोड़ा और हाथी आदि एवं दूर गामी वाहनों को प्राप्त करें। दुधारू पशुओं को वढा कर दूध, घी आदि योग्य पदार्थों का सेवन करें। उत्तम विज्ञान एवं उत्तम बल प्राप्त कर शरीर, आत्मा और मन से वलिष्ठ हों। ब्रह्म तेजस्वी बनें। उत्तमोत्तम प्रकार कें अन्नों का भरपूर उत्पादन करें। साथ ही दूसरे प्रकार का अन्नाद्य हैं परमात्मा, जिसका भक्षण करके आत्मा वलवती होती है। इन प्रकार के उत्पादनों से भूलोक जगमगाता है। किन्तु इनका उत्पादन संतुलित रूप में हो यह समेधय शब्द से अभिप्रेत है।

इन्हीं भावों से प्रेरित होकर मैं प्रथम समिधा अग्नि को अर्पित करता हूँ यह आहुति मेरे लिए नहीं अपितु ज्ञानपूर्वक प्रज्वलित की गई इस यज्ञाग्नि के निमित्त है। धरती लोक की समृद्धि के निमित्त है।

दूसरी आहुति अन्तरिक्ष लोक के निमित्त है। अन्तरिक्ष के दो देवता हैं वरुण और विद्युन। विद्युत् शक्ति दो प्रकार की तरंगों से मिलकर प्रकाशित होती है इसी के प्रतीक स्वरूप दो मंत्रों से एक समिधा अग्नि को अर्पित की जाती हैं।

ओ३म् समिधाग्निं दुवस्यत, घृतैर् बोधयतातिथिम्।
आस्मिन् हव्या जुहोतन। यजु० ३।१

भली प्रकार प्रज्ज्वलित होने वाली काष्ठों से अग्नि को प्रज्ज्वलित करें. बिना किसी विधि का त्याग किए नित्य इस अग्नि को घृत के द्वारा सुदीप्त करें. प्रवुद्ध करें। सभी प्रकार के हव्य पदार्थों का मिश्रण कर के [सामग्री के रूप में] अग्नि को समर्पित करें।

ओ३म् सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन। अग्नये जातवेदसे स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे इदं न मम।

यजु० ३।१

उत्तम प्रकार से धूम्र रहित ज्वालायुक्त अग्नि को तीव्र करने घृत को भली प्रकार गर्म करके हुत करें। यह आहुति अग्नि के लिए तथा ज्ञान पूर्वक उत्पन्न की जा सकने वाली अन्तरिक्ष की विद्युत् निमित्त दी जा रही है मेरे लिए नहीं।

ओ३म् तं त्वा समिद्भिरङ्गिरो। घृतेन वर्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठच स्वाहा इममग्नयेऽङ्गिरसे इदं न मम।

–यजु० ३।३

.तीसरी समिधा घृत में डुबो कर द्युलोक के लिए अर्पित करें।

हे अग्नि! तुझ को इस घृत के द्वारा भली प्रकार बढ़ाता हूँ। जिस से विशाल जाज्वल्यमान सब भूतों को भली प्रकार विभक्त करने वाला जो सूर्य रूप आंगिरस है उसके निमित्त हुत करता हूं यह आहुति मेरे लिए नहीं अपितु अग्नि रूप सूर्य के लिए है।

गृहस्थ यजमान द्वारा दी जाने वाली आहुति–

एक ही मंत्र को पाँच बार पढ कर के पाँच आहुति क्रमशः एक एक मंत्र से एक एक आहुति दें।

इस मंत्र में पाँच वरदान गृहस्थ आश्रम के लिए माँगे गए हैं। प्रजा पशु, ब्रह्मवर्चस, दो प्रकार का अन्नाद्य-एक अन्नादि भोग्य पदार्थ जो जड़ शरीर को तृप्त करते हैं और दूसरा अन्नाद्य चेतन प्रभु की भक्ति जिस से आत्मा तृप्त होती है।

ओ३म् अयं त इध्म आत्मा जातवेदस् तेनेध्यस्व, वर्धस्व, चेद्ध, वर्धय, चास्मान् प्रजया, पशुभिर्, ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे–इदं न मम। –आश्वला० १।१०।१२

यह आत्मा तेरा इन्धन है। हे जातवेदस्-ज्ञान के उत्पन्न करने वाले प्रभो! मैं अपनी आत्मा को सर्वात्मना आप को समर्पित करता हूँ। आप के परम तेज से उत्पन्न इस जातवेदस अग्नि के द्वारा प्रजया इध्यस्व उत्तम सन्तान को जन्म देकर अपने कुल को दीप्तिमान कीजिए। पशुभिः वर्द्धस्व-उत्तम दूध देने वाली दुधारू गाएँ व वाहन के योग्य पशुओं को बढ़ाइए। ब्रह्मवर्चसेन इद्ध-उत्तम ज्ञान व तेज भी हमारे भीतर प्रदीप्त कीजिए। संयम से हम तेजस्वी बनें। अन्नाद्येन वर्द्धय-भोग्य पदार्थों को बढ़ाइए तथा हम में ईश्वर भक्ति को भी बढ़ाइए अर्थात् इन पाँचों के द्वारा हम प्रकाशित हों और बढें। किन्तु हमारे देव! आप कृपा कर समेधय-इन पाँचों वरदानों को सन्तुलित रूप में दीजिए जिस से हमारा सुख बढे। इस निमित्त सामाजिक कल्याण के लिए यह आहुति है मेरे लिए नहीं।

जल सिंचन –

अदिति अनुमति और सरस्वती ये तीन देवियाँ अर्थात् तीन दिव्यताएँ हैं। यदि जीवन रूपी. यज्ञ को हम इन तीन दिव्यताओं से सींच लें तो हमारा जीवन भी सुगध से सुरभित हो उठेगा। अदिति उस सत्य ज्ञान को कहते हैं जिसे त्रिकाल में कोई खण्डित नहीं कर सकता ऐसे सत्य ज्ञान से हम सिंचित हों। अनुमति - अनुभवों से युक्त बुद्धि का नाम है। अनुभव जनित ज्ञान जीवन में और अधिक निखार उत्पन्न करता है। हमारे जीवन अनुभवियों से अनुसिंचित रहें। सरस्वती - माधुर्य से भरा व्यवहार. प्रभु की उपासना ज्ञान कर्म व उपासना वह जीवन जल है जो मानव जीवन को हरा भरा कर देता है। सभी सिद्धियाँ इन्हीं तीन उपलब्धियों से सिद्ध होती हैं।

इसी प्रकार शिल्प विद्या में भी अग्नि वायु व जल क्रमशः अदिति अनुमति और सरस्वती रूप हैं। इन्हीं के सयोग से शिल्प विद्या सिद्ध होती है।

ओ३म् अदितेऽनुमन्यस्व। – गोमिल १।३।१ पूर्व में–
हे अग्नि रूप ज्ञान ! हम तेरे अनुकूल रहें।

ओ३म् अनुमतेऽनुमन्यस्व। गोमिल० १।३।२ पश्चिम में–
हे वायु रूप कर्म ! हम श्रेष्ठ कर्मों का अनुगमन करें।

ओ३म् सरस्वत्यनुमन्यस्व। गोमिल० १।३।३ उत्तर में–
हे जल रूप उपासना ! हम तेरे द्वारा सिञ्चित हों।

ओ३म् देव सवितः प्र सुव यज्ञं. प्र सुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु,

वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु। –यजु० ३०।१ चारों दिशाओं में

हे दिव्य गुणों से युक्त देवी सविता ! आप हमें उत्तम ज्ञान. कर्म और उपासना से युक्त कीजिए। तभी हमारा यज्ञ सफल व सार्थक होगा। तभी मैं वास्तव में यज्ञ पति बन कर इस धरती पर दिव्यता को जन्म दे सकूँगा। ऐश्वर्य की प्राप्ति कर सकूँगा।

हे अपनी ज्योति से पवित्र करने हारे प्रभो ! अपनी ज्योति से आप हमें पवित्र बना दीजिए। हे वाचस्पति ज्ञान के स्वामी प्रभो ! मुझे अपने ज्ञान से सिञ्चित कर दीजिए। जिस प्रकार सूर्य अपनी किरणों से धरती को सिञ्चित कर हरा भरा कर देता है। इस यज्ञ से हम दोनों प्रकार के फलों का आस्वादन कर सकें।

चारों दिशाओं के दो दो युग्म हैं। पूर्व और पश्चिम का एक जोडा है इन दोनों दिशाओं में पूर्व प्रधान है अतः प्रथम पूर्व दिशा में जल सिंचन करें पश्चात् पश्चिम दिशा में। दूसरा युग्म दक्षिण और उत्तर का इस में उत्तर दिशा प्रमुख है। यह प्राधान्यता इन दिशाओं में दिव्य स्थितशक्तियों से है अतः तीसरे मंत्र से उत्तर दिशा में जल डाल कर पुनः चौथे मंत्र से चारों ओर जल का प्रसेचन करें :

निम्न लिखित चार मंत्रों में से प्रथम मंत्र से उत्तर दिशा में आहुति दी जाय तथा दूसरे मंत्र से दक्षिण दिशा में। तीसरे और चौथे मंत्र से यज्ञ के मध्य में आहुति दी जाय !

इन आहुतियोंका इन दिशाओं सें क्या सम्बन्ध है यह जान लेना भी आवश्यक है। हमारे पृथ्वी के दो कोण हैं। एक उत्तरी ध्रुव कहाता

है दूसरा दक्षिणी ध्रुव। उत्तरी ध्रुव से यह पृथ्वी अग्नि तत्व को धारण करती हैं! और दक्षिणी ध्रुव से पृथ्वो सोम तत्व को ग्रहण करती हैं। अग्नितत्व को हम पौरूषेय तत्व और सोम तत्व को हम स्त्रो संबंधी तत्व भी कह सकते हैं। उत्तर दिशा पौरुषेय दिशा है और दक्षिण दिशा स्त्री की दिशा हैं। इसीलिए यज्ञ में पुरुषउत्तर पार्श्व में और त्री दक्षिण पार्श्व में बैठती हैं। इन दिशाओंसे पृथ्वी उत्पादन का सामर्थ्य प्राप्त करती हैं। अग्नि और सोमतत्व के सयुक्त होन पर ही प्रजा का निर्माण होता हैं। मनुष्य प्रजापति बन जाता है! इसीलिए तीसरी आहुति प्रजापतये स्वाहा है। स्त्री और पुरुष का सर्वोत्तम ऐश्वर्यं भी प्रजा ही है! अतः प्रजापति बनकर यह इन्द्राय स्वाहा के रूप में ऐश्वर्य के लिये आहुति देता है! संकेत से दर्शाए गये इन वैज्ञानिक तथ्यों से अनेक रहस्य उद्घाटित होते हैं। जिनपर निरन्तर अनुसंधान की आवश्यकता है!

आघारावाज्याहुति मन्त्र –

– घृताहुति

ओ३म् अग्नये स्वाहा। इदमग्नये इदं न मम।

–यजु० २२।२७ उत्तर में–

हे प्रभो! यह आहुति मैं उत्तरी ध्रुव से प्राप्त होने वाले आग्नेय तत्व के लिए देता हूँ।

ओ३म् सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय-इदं न मम।

–यजु० २२।२८ दक्षिण में–

यह आहुति मैं दक्षिण द्वारा प्राप्त सोम शक्ति के लिए देता हूँ।

आज्याभागाहुति मन्त्र –

ओ३म् प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये - इदं न मम । – यजु० १८।२८ मध्य मे–

यह आहुति मैं प्रजापति के लिए अर्थात् उत्पादिनी शक्ति के लिए देता हूँ ।

ओ३म् इन्द्राय स्वाहा । इदं इन्द्राय- इदं न मम ।
–यजु० २२।२७ मध्य में

हे प्रभो ! यह आहुति मैं ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए अर्पित करता हूँ ।

व्याहृति मन्त्र –

ओ३म् भूरग्नये स्वाहा इदमग्नये-इदं न मम ।

हे प्रकाशस्वरूप प्रभो! भू गर्भ तथा भू पृष्ठ पर देदीप्यमान अग्नि के लिए यह आहुति अर्पित करता हूँ । यह आहुति अग्नि के लिए है मेरे लिए नहीं ।

ओ३म् भुवर्वायवे स्वाहा । इदं वायवे-इदं न मम।

हे गति शील प्रभो ! यह आहुति अन्तरिक्षस्थ वायु के लिए अर्पित करता हूँ । यह आहुति वायु के लिए है मेरे लिए नहीं ।

ओ३म् स्वरादित्याय स्वाहा । इदमादित्याय - इदं न मम ।

हे परम तेजस्वी देव ! यह आहुति मैं द्यु स्थानीय आदित्य देव सूर्य के लिए अर्पित करता हूँ। अपने लिए नही यह आहुति सूर्य के लिए हैं।

ओ३म् भूर्भुवः स्वरग्नि वाय्वादित्येभ्यः स्वाहा।
इदमग्नि वाय्वादित्येभ्यः - इदं न मम।

हे भूर्भुवः स्वः स्वरूप देव ! पुनः इन तीनों लोकों के लिए एक सम्मिलित आहुति देता हूँ। यह आहुति त्रिलोकी के लिए है मेरे लिए नहीं।

स्विष्ट कृत आहुति –

सु+इष्ट इन शब्दोंके मेल से स्विष्ट शब्द बनता है ! सु अर्थात् अच्छा. इष्ट अर्थात् प्रिय ! मनुष्य को मिष्ट रस. मिष्ट वाणी मिष्ट व्यवहार ही प्रिय लगता है। संस्कृत स्विष्ट शब्द से अंग्रेजी भाषा का स्वीट शब्द बना है! जिस प्रकार कि धातुओं में सोने का महत्व है वैसे ही खाद्य पदार्थ में चावल का महत्व है ; चावल समस्त अन्नों का प्रतिनिधि है! इस मंत्र से पके हुए बिना नमक के चावल की अथवा घी को आहुति दी जाती है ! प्रायः अन्न इससे मिष्ठान्न की भी आहुति दी जाने लगी है ! इस आहुति का विशेष अभिप्राय यही है कि हमारी वाणी में व्यवहार में माधुर्य हो। मीठी वाणी से सभी कामनाएँ पूरी होती हैं। प्रायश्चित कर भविष्य में मीठी वाणी के प्रयोग का प्रण प्रत्येक यज्ञप्रेमी को लेना चाहिए। साथ ही इस यज्ञ कर्म में आहवनीय द्रव्यों में जो कुछ न्यूनता रह गई हो उसकी पूर्ति के लिये भी यह विशेष आहुति दी जा रही है।

ओ३म् यदस्य कर्मणोत्यरीरिचं. यद्वा न्यूनमिहाकरम् । अग्निष्टत् स्विष्टकृत् विद्यात्. सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे । अग्नये स्विष्टकृते. सुहुतहुते. सर्व प्रायश्चित्ताहुतीनां. कामानां. समर्द्धयित्रे. सर्वान्नः कामान्तसमर्द्धय स्वाहा । इदमग्नये स्विष्टकृते- इदं न मम ।

शतपथ १४।९।४।२४

हे समस्त कामनाओंके पूर्ण करने हारे प्रभो ! हमारे इस यज्ञकर्म में जो कुछ अतिरेक आधिक्य अथवा न्यून क्रिया हो गयी है. वह हमने अग्नि में कल्याण की भावना से की है । अतः हे दिव्यगुणों से युक्त अग्निरूप प्रभो ! वह सब भली प्रकार भस्म होकर हम सब के लिये सु इष्ट कर हो । लाभकारी हो. कल्याण के लिए हो । अग्नि में भली प्रकार हुत होने वाले द्रव्य तथा मेरे लिये मेरे द्वारा किये जानेवाले उत्तम कर्मरूप यज्ञ भी सुफल प्रदान करने वाले हों । इन प्रायश्चित रूप में डाली जा रही आहुतियों से मेरी कामनायें भली भांति पूर्ण हों । हे सुख प्रदाता प्रभो ! मेरे परम पुरूषार्थ से किए जानेवाले सुकर्मों. सुप्रयत्नों का फल हमारे लिये हितकर हो । आप हमारी सब उत्तम पुरुषार्थ पूर्वक की जाने वाली सुकामनाओं को पूरा कीजिए । इन उत्तम वचनों से मैं यह आहुति अर्पित करता हूँ !

प्राजापत्याहुति –

ओ३म् प्रजापतये स्वाहा – इदं प्रजापतये इदन्न मम

इस आहुति को मन में मौन रूप में पढ़कर फिर स्वाहा कह कर घृत की एक आहुति दीजिए । सर्वथा मौन होकर उस प्रजापति प्रभु का

सर्वात्मना ध्यान कर मौन आहुति दी जानी चाहिए। उस विराट् प्रजापति के लिए अपनी तुच्छ सी आहुति की कल्पना से भी भक्त मौन हो जाता है और विनम्रता से अपनी आहुति मौन भाव से देता है।

हे प्रजा के स्वामिन् ? यह आहुति आपका स्मरण कर आपकी सृष्टि के लिये दे रहा हूँ। यह आपके लिये दी गई है अर्थात् आप ही के ब्रह्माण्ड के लिये. मेरे लिये नहीं अपितु प्रजापति रूप आपके लिये इस आहुति को अर्पित करता हूँ।

पावमानी आहुति –

> **ओ३म् भूर्भुवः स्वः। अग्न आयूंषि पवस. आ सुवोर्ज-मिषं च नः। आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा। इदमग्नये पवमानाय–इदं न मम।** ऋक्० ९।६६।१९

हे भूलोक. अन्तरिक्ष लोक तथा द्युलोक के स्वामी ! हे त्रिलोकाधिपति परमेश्वर ! आप अपने अग्निरूप प्राण तत्त्व से हमारी आयु की रक्षा कीजिए और हमारे लिए उत्तम ऐश्वर्य और भोग्य पदार्थ अन्न तथा ज्ञान एवं बल तथा ओज को प्राप्त कराइए। हमारे मनों में आने वाले बुरे विचारों की तथा हमारे दुःखों को तथा मार्ग में आनेवाली बाधाओं को दूर कीजिए तथा हमें दुष्कृतों से बचाइए। इसलिए हम आहुति अर्पित करते हैं। सब विध पवित्र करने वाली तथा सब विध रक्षा करने वाली अग्नि के लिए वह आहुति अर्पित करते हैं। अपने लिए नहीं।

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । अग्निर्ऋषिः पवमानः पांचजन्यः पुरोहितः । तमीमहे महागयं स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय-इदं न मम । ऋक्० ९.६६।२०

हे अग्नि, वायु तथा जल के भूताधिपति देव ! पंच ज्ञानेंद्रियों और पंच कर्मेन्द्रियों से जनित उत्तम ज्ञान कर्म व उपासना के द्वारा हमें निरन्तर अग्नि तुल्य आगे की ओर उन्नति पथ पर अग्रसर कीजिए । हमें क्रान्तदर्शी बनाइए । हमें अपने सत्य अग्निरूप ज्ञान से पवित्र कर दीजिए । हे देव ! इसलिए हम विविध प्रकार से आपका स्तुतिरूप गान करते हैं । जिससे हम आपको प्राप्त कर सकें । इन्हीं श्रेष्ठ विचारों से अभिभूत होकर हम यह आहुति अर्पित करते हैं । पवित्र करने वाली तथा पवित्रता से युक्त इस अग्नि के लिये यह आहुति है । अपने लिए नहीं ।

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । अग्ने पवस्व स्वपा, अस्मेवर्चः सुवीर्यम् । दधद्रयिं मयिपोषं स्वाहा । इदमग्नये पवमानाय - इदं न मम । ऋक्० ९.६६।२

हे सच्चिदानंद स्वरूप देव ! आपकी यह त्रिविध अग्नि, विद्युत और सौरशक्ति हमें अपने प्रकाश व गति से पवित्र बना दे । हममें इतना बल व सामर्थ्य तथा ज्ञानरूप वर्च एवं शारीरिक उत्तम शक्ति भर दे । जिससे हम आत्मनिर्भर हो जाएँ, अपनी रक्षा स्वयं कर सकें । हे देव आप हमें पुष्टियोग्य पदार्थ तथा उत्तमोत्तम ऐश्वर्य निरन्तर देते रहिये । इसीलिए

हम यह आहुति अर्पित करते हैं । यह पावमानी अग्नि सब को एश्वर्य युक्त बनाए केवल मुझे ही नही । यह आहुति प्राणीमात्र के हित के लिये है केवल मेरे अपने लिये ही नही ।

ओ३म् भूर्भुवःस्वः । प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो, विश्वा जातानि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु, वयं स्याम पतयो रयीणाम् स्वाहा। इदं प्रजापतये-इदं न मम । ऋक्० १०।१२१।१०

हे प्राण, अपान और व्यान रूप प्रभो ! आप ही समस्त प्राणीमात्र के स्वामी हो । आपसे भिन्न कोई दूसरा नहीं है जो इस सृष्टि का निर्माता हो । इस समस्त सृष्टि में जो कुछ उत्पन्न होता है उन सबके एकमात्र आप ही स्वामी हो । हे मेरे पिता ! हम लोग जिन श्रेष्ठ कामनाओं को लेकर आपकी भक्ति और उपासना करते हैं । जिन कामनाओं से युक्त होकर इस महायज्ञ को कर रहे हैं आपका आश्रय लेते हैं । हे पिता ! वह कामनाएँ हमारी पूर्ण होवें जिससे हम धन और ऐश्वर्य के स्वामी बन जाएँ । अतः यह आहुति हम मेघों के निमित्त देते हैं जिससे प्राणीमात्र का कल्याण हो केवल मात्र मेरा ही नही ।

अष्टाज्याहुति मंत्र –

ओ३म् त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान्, देवस्य हेळोअव यासिसीष्ठाः । यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो,

विश्वा द्वेषांसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा। इदमग्नी-वरुणाभ्यां- इदं न मम।
यजु० २१।३

हे हमारे अग्निस्वरूप देव ! आप श्रेष्ठ मार्ग पर चलने वालों के मार्ग में आनेवाली बाधाओं को जानने हारे हो। दिव्यगुण युक्त. सन्मार्ग पर जाने वाले देवताओं की समस्त बाधाओं को उत्तम प्रकार से दृढतापूर्वक दूर कीजिए।

हम सदा यज्ञ कर्मों में तथा अन्य श्रेष्ठ कार्यों में सदा स्थिर रहें। अग्नि के समान परम तेजस्वी. अत्यन्त पवित्र हो जाएँ। श्रेष्ठ. अग्निरूप हो जाएँ। जिस प्रकार अग्नि समस्त द्रव्यों को जलाकर भस्म कर देती है। उसी प्रकार मेरे हृदय में स्वार्थ प्रेरित जितनी दुष्ट भावनाएँ हैं उन सबको आप दूर कीजिए। भस्म कर डालिए। इस हेतु समस्त प्रजा के द्वेष भाव को नष्ट करने की भावना से यह आहुति अर्पित करते हैं। मेरी यह आहुति द्युलोक तथा अन्तरिक्ष लोक के लिए है। केवल मेरे भूलोक के लिए ही नहीं।

ओ३म् स त्वन्नो अग्नेऽवमो भवोती. नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो. वीहि मृडीकं सुहवो न एधि स्वाहा। इदमग्नीवरुणाभ्यां-इदं न मम।
यजु० २१।४

हे अग्निरूप प्रभो आप हमारी सर्वविध रक्षा कीजिए। हम सदा प्रकाश में रहते हुए अपनी रक्षा के साधनों को प्राप्त

होवें। प्रकाश समय जब हम कार्य में प्रवृत्त रहते हैं उस समय आने वाली बाधाओं को भी हे पिता आप दूर कीजिए। इस वरुण लोक अर्थात् अन्तरिक्ष लोक से आने वाली बाधाओं से भी सदा हमारी रक्षा कीजिए। हे मेरे प्रभु आप सुहव सरलता से पुकारने पर अर्थात् स्मरण मात्र से ही हमारी पुकार को सुन लेते हो। हे करूणाकर देव आप. हमारे लिये उत्तम सुखों को बढ़ाइए तथा हमें सब विध सुख प्रदान कीजिए। उत्तम सुखों की प्राप्ति के लिये मैं यह आहुति भूलोक एवं अंतरिक्ष लोक के निमित्त देता हूँ। केवल मात्र मेरे पृथ्वी लोक के लिए ही नहीं।

ओ३म् इमं मे वरुण श्रुधी. हवमद्या च मृळय। त्वामवस्युरा चके स्वाहा। इदं वरुणाय. इदं न मम।

यजु० २१।१

हे वरण करने योग्य वरुण प्रभो! आप मेरी इस प्रार्थना को सुनिए। मेरी इस प्रार्थना को सुनकर आज मुझे सुखों से परिपूर्ण कर दीजिए। मैं अपने सब विध गुण. कर्म. स्वभाव से आपको हर प्रकार से प्रसन्न करना चाहता हूँ। जिससे मैं आप द्वारा की जाने वाली रक्षा का पात्र बन सकूं। मैं आपके रक्षारूप वरदहस्त का याचक हूँ। मैं सदा उत्तम मार्ग पर चलने का स्वाहारूप दृढ आश्वासन प्रदान करते हुए यह आहुति दे रहा हूँ। यह मेरी आहुति वरुण लोक. अन्तरिक्ष

लोक के लिए है। उत्तम कार्यों के लिए है। मेरे स्वार्थयुक्त कर्मों के लिए नहीं।

ओ३म् तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्. तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेळमानो वरुणेह बोधि-उरुशंस मा न आयुः प्रमोषीः स्वाहा। इदं वरुणाय इदं न मम। ऋक्० १।२४।११

हे अत्यन्त वरण करने योग्य वरणीय प्रभो! मैं उत्तम सत्य ज्ञान के द्वारा आपको प्राप्त करने के लिए आपकी उपासना में प्रवृत्त हूँ। मैं यज्ञकर्ता के रूप में उत्तम यज्ञ रूप कार्य करते हुए आपकी प्राप्ति की आशा करता हूँ।

हे वहु विध प्रशंसा के योग्य मेरे देव! आप मेरी स्तुति को स्वीकार कीजिए। मेरी प्रार्थना को तिरस्कृत मत कीजिए। मुझ से आप किस विध वरण किए जा सकते हैं उस प्रकार की प्रेरणा द्वारा मुझे बोध कराइए। जब तक मैं आपको प्राप्त न कर लूं तब तक आप मेरी आयु को नष्ट मत कीजिए। इस हेतु से मैं अन्तरिक्ष लोक के लिए यह आहुति अर्पित कर रहा हूँ। केवल भूलोक के लिए ही नहीं।

ओ३म् ये ते शतं वरुण ये सहस्रं. यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः।। तेभिर्नोऽ अद्य सवितोत विष्णु-र्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा। इदं

वरुणाय. सवित्रे विष्णवे. विश्वेभ्यो. देवेभ्यो. मरुद्भ्यः. स्वर्केभ्यः – इदं न मम । –आर्ष वचन

हे वरुण प्रभो ! हमारी इस सृष्टि के जो प्रमुख विश्वदेव हैं जिनमें सूर्य. जल. वायु. और पृथ्वी मुख्य हैं । ये निरन्तर इस सृष्टि यज्ञ के कर्ता हैं । ये अबाध गति से निरन्तर कार्यरत हैं । इनमें निरन्तर सैकडों. हजारों प्रकार से दोष उत्पन्न होते हैं । जिनसे जल. वायु प्रदूषण बढ़ जाता है । हमारे इस यज्ञ के द्वारा सूर्य की किरणों में उत्पन्न दोष वायु और वृष्टि जल में उत्पन्न दोष रूप पाशों से आप हमें मुक्ति दिलाइए । हम यह आहुति इन देवताओं के लिये अर्पित करते हैं । यह आहुति आकाशीय जलकणों के लिए. सूर्य के लिए. धरती के लिए. वायुओं के लिए तथा सभी ३२ जड़ देवताओं के लिए है । केवल हमारे लिए नहीं ।

ओ३म् अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्चसत्यमित्त्व-मयासि । अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजङ् स्वाहा । इदमग्नये अयसे–इदं न मम ।

कात्या० श्रौत० २१।१।११

हे यज्ञरूप सर्वव्यापक प्रभो ! हमारी सृष्टि के जड़ देव-ताओं में ऐसे दोष युक्त कीटाणु जो अत्यन्त कठिनाई से नष्ट होते हैं. इस हमारे सर्वत्र. प्रभाव करने वाले व्यापक यज्ञ से दूर हो जाएँ । हे प्रभो ! जैसे आप अत्यन्त सूक्ष्म होकर सर्वत्र व्याप्त हो वेसे ही इस यज्ञ का सूक्ष्म रूप सर्वत्र ही जाता है ।

यह हमारा कथन सर्वथा सत्य है। इस यज्ञ के द्वारा वनौषधियों के समस्त सूक्ष्म कण दूर-दूर तक पहुँच कर; प्राप्त होकर उत्तम औषधि का कार्य करते हैं. सृष्टि के प्रदूषण के निवारण के उद्देश्य से हम उक्त आहुति समर्पित कर रहे हैं। यह आहुति अग्नि के द्वारा सूक्ष्म रूप हो कर सर्वत्र व्याप्त हो जाए इस उद्देश्य से अर्पित कर रहा हूँ। अपने लिये नहीं।

ओ३म् उदुत्तमं वरुण पाशमस्मद्. अवाधमं वि मध्यमं श्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवा नागसो अदितये स्याम स्वाहा। इदं वरुणाया-दित्यायादितये च—इदं न मम। ऋक्० १।२४।१५

हे यज्ञरूप परमात्मन्! आपके अन्तरिक्षस्थ जलकणों में और वायु में जो अधम. मध्यम और उत्तम दोष हैं इन तीनों प्रकार के दोषों को आप नष्ट कर दीजिए। हम इन दोषों से वरुण को मुक्त कराने के हेतु ही यह पवित्र यज्ञ कर रहे हैं। इस प्रकार हमारा जो इस यज्ञ का अखण्ड व्रत चल रहा है उसके द्वारा सूर्य को भी दोष रहित बनाने के लिए हम यह आहुति अर्पित कर रहे हैं। हमारी यह आहुति अन्तरिक्षस्थ जल कण व वायुओं के लिए बारहों महीने सूर्य की किरणों को दोष रहित बनाए रखने के लिए है। मेरे अपने स्वार्थ के लिए नहीं।

जल के तीन प्रकार के दोषों में जल का अधिक उष्ण हो जाना यह भी एक प्रकार का उत्तम दोष है जो इसमें वर्णित है क्योंकि यह दोष स्वयं ही नष्ट हो जाता है और जल को उत्तम भी बना देता है। उसकी ऊष्णता की शांति के लिए भी

कामना की गई है। जल और वायु में सत्. रज. तम युक्त दोष निमित्त से आ जाते हैं। रज. तम गुण का नाश करना है और सतोगुण से रजो गुण की निवृत्ति होती है किन्तु अन्त में सत गुण रहित स्वरूप ही सर्व शुद्ध कहाता है। इन्हीं बन्धनों के निवारण की प्रार्थना इस मन्त्र में है। यज्ञ में हुत द्रव्य से अग्नि में सत्वगुण युक्त उत्तम प्रकार का मिश्रण वायु में व्यापता है। पर यज्ञ की उष्णता से उसमें भी कार्बन का निर्माण होता है यह कार्बन वायु में एक उत्कृष्ट प्रकार का दोष है जिसे वृक्ष वनस्पति आहार के रूप में ले लेते हैं। इस दोष के निवारण के बाद का वायु ग्राह्य होता है।

ओ३म् भवतन्नः समनसौ सचेतसावरेपसौ। मा यज्ञङ् हिङ् सिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ. भवतमद्य नः स्वाहा। इदं जातवेदोभ्यां-इदं न मम।

यजु. ५।३

हे सृष्टि यज्ञ के संचालक यज्ञपति देव ! आपकी अनुकम्पा से हम यजमान दम्पति इस परमार्थ वृत्ति और भौतिक यज्ञ के द्वारा अच्छे मनवाले. अपने कर्तव्य के प्रति जागरूक रहने वाले तथा पापवृत्तियों से मुक्त हो जाएँ। हम यज्ञपति. यजमान तथा हमारे द्वारा किए जा रहे इस यज्ञ को कोई नष्ट न कर सके अथवा हानि न पहुँचा सके। हम दोनों यजमान पति व पत्नी के द्वारा यह जो ज्ञानपूर्वक उत्तम अग्नि प्रज्वलित की गई है वह हम दोनों के लिये आज अत्यन्त कल्याणकारक होवें। यह आहुति मैं इसी प्रदीप्त यज्ञ की अग्नि के लिए अर्पित कर रहा हूँ। अपने लिए नहीं।

अथ दैनिक यज्ञः

प्रतिदिन करने योग्य इस यज्ञ में केवल पांच मिनट लगते हैं।

उषा आहुति मंत्र –

ओ३म् सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा।
ओ३म् सूर्यो वर्चो ज्योतिर् वर्चः स्वाहा।
ओ३म् ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योति स्वाहा।

यजु० ३।९

[१] हे प्रकाश स्वरूप देव आपकी बनाई यह जो सूर्य की ज्योति है और ज्योतिरूप सूर्य है उसके लिए ही इस उषा काल में हम यह आहुति अर्पित करते हैं।

[२] हे वर्चस्वी प्रभो! आपके इस सूर्य का जो गतिरूप वर्च अथवा बल है और जो बलशाली सूर्य है यह आहुति उषा काल में हम उसके लिए अत्यन्त श्रद्धा से अर्पित करते हैं।

[३] हे परम तेजस्वी प्रभो! आपके इस तेजस्वी सूर्य के लिए और सूर्य के तेज के लिए उषा काल में हम श्रद्धापूर्वक आहुति अर्पित करते हैं।

ओ३म् सजूर्देवेन सवित्रा, सजूरुषसेन्द्रवत्या।
जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा। यजु० ३।१०

इस अखिल ब्रह्माण्ड का प्रसव करने वाले इस सूर्य के द्वारा जिस ऐश्वर्य युक्त उषा से युक्त होकर सूर्य प्रकट हो रहा है उस प्रकाश स्वरूप सूर्य के लिए हम उषा काल में अत्यन्त श्रद्धा से यह आहुति अर्पित करते हैं।

सन्ध्या आहुति मंत्र –

ओ३म् अग्निर्ज्योतिर् ज्योतिरग्निः स्वाहा।

ओ३म् अग्निर्वर्चो: ज्योतिर्वर्चः स्वाहा। यजु० ३।९

इस मंत्र को मन में पढ़कर आहुति दें।

ओ३म् अग्निर्ज्योतिर् ज्योतिरग्निः स्वाहा।

[१] हे अग्निरूप प्रभो ! इस अंधकार के समय हमें एकमात्र जिस अग्नि का आश्रय प्राप्त है उस ज्योतिरूप अग्नि और अग्निरूप ज्योति के लिए हम श्रद्धापूर्वक यह आहुति अर्पित करते हैं।

[२] हे गतिमान अत्यन्त वलयुक्त देव ! रात्रि की इस बेला में गति और वल से युक्त अग्नि में और अग्नियुक्त इस वल और गति से युक्त ज्वाला में हम अपनी श्रद्धाहुति अर्पित करते हैं।

[३] हे परम तेजस्वी प्रभो ! आपके इस अग्निरूप अग्नि में मैं अपनी श्रद्धाहुति अर्पित करता हूँ।

ओ३म् सजूर्देवेन सवित्रा. सजू रात्र्येन्द्रवत्या ।
जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा । यजु० ३।१०

हे सविता देव आपकी ऐश्वर्यशालिनी रात्रि के साथ सविता देव के द्वारा प्रकाशित होने वाली इस अग्नि को. जो गति. बल और प्रकाशयुक्त है. हम अपनी प्रीतियुक्त आहुति अर्पित करते हैं ।

इन मंत्रों से दोनों कालों में आहुति दी जानी चाहिए ।

ओ३म् भूरग्नये प्राणाय स्वाहा । इदमग्नये प्राणाय इदं न मम ।

ओ३म् भूवर्वायवे अपानाय स्वाहा । इदं वायवे ऽपानाय– इदं न मम ।

ओ३म् स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा । इदमादित्याय व्यानाय– इदं न मम ।

ओ३म् भूर्भुवः स्वरग्नि वाय्वादित्येभ्यः प्राणापान व्यानेभ्यः स्वाहा । इदमग्नि वाय्वादित्येभ्यः प्राणापान व्यानेभ्यः– इदं न मम ।

[१] हे प्राणदाता प्रभो ! मैं भूलोक के लिये. भूलोक की अग्नि के लिये अन्नद्वारा प्राणदात्री धरती के निमित्त यह आहुति अर्पित करता हूँ । यह अग्नितत्व और प्राणवायु के निमित्त है । मेरे लिए नहीं ।

[२] हे अपान शक्ति के देने हारे प्रभो ! मैं आपके रचे अन्तरिक्ष लोक के लिए तथा अन्तरिक्ष में व्याप्त वायु के लिये तथा वायु रूप में स्थित सूक्ष्म अपान शक्ति के लिए उक्त आहुति अर्पित करता हूँ । अपने लिए नहीं ।

[३] हे व्यान रूप शक्ति के देने हारे प्रभो ! आपके रचे द्यूलोक के लिए. सूर्य के लिए. उस तेज रूप व्यान के लिए मैं यह आहुति अर्पित करता हूँ । अपने लिए नहीं ।

[४] हे त्रिलोकी के धारण करने हारे प्रभो ! आपके तीनों लोकों में स्थित त्रिविध सूक्ष्म अनेक शक्तियों के लिए मैं यह आहुति अर्पित करता हूँ । अपने लिए नहीं । यह मेरी आहुति तीनों लोकों के लिए है. उसकी दिव्य शक्तियों के लिए हैं । मेरे लिए नहीं ।

ओ३म् आपो ज्योतिरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरो३म् स्वाहा ।

हे सर्व व्यापक देव ! आपके दिये भूर्भुवः स्वः रूप जो सर्वव्यापक त्रिविध रस हैं । जो ज्योतिरूप. रसरूप और अमृत-रूप हैं उन त्रिविध श्रेष्ठ जलों के लिए मैं यह आहुति दे रहा हूँ । जो रस हमारे रक्षक हैं । उनके हेतु यह आहुति मैं प्रदान करता हूँ ।

ओ३म् यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते । तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ।

यजु० ३२।१४

हे उत्तम बुद्धि के देने हारे प्रभो ! जिस उत्तम ज्ञान से मनुष्य दिव्यता को प्राप्त करता है. ऐसे दिव्यगुणों से युक्त तथा अत्यन्त श्रेष्ठ अनुभवों के धारक. पितर जन जिस उत्तम बुद्धि को आपकी अनुकम्पा से प्राप्त करते हैं कृपा कर ऐसी उत्तम बुद्धि से आप हमें बुद्धियुक्त कीजिए। आपकी कृपा से हमें सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों प्रकार के ज्ञान को ग्रहण करने वाली बुद्धि आज प्रदान कीजिए। मुझे मेधावी बना दीजिए। इन कामनाओं से युक्त होकर हम यह आहुति अर्पित करते हैं।

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद् भद्रं तन्न आसुव स्वाहा। यजु० ३०।३

हे दिव्यगुणों से युक्त सकल जगत् के उत्पत्ति कर्ता सविता देव आप इस यज्ञ द्वारा विश्व में व्याप्त सम्पूर्ण प्रदूषण को दूर कीजिए तथा इस श्रेष्ठतम कर्म यज्ञ के द्वारा हमें उत्तम सुख तथा कल्याणकारी फलों को प्राप्त कराइए। इसी दुरित रूप अपवित्रता के नाश करने हेतु हम यह आहुति अर्पित करते हैं।

ओ३म् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्. विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्य३स्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्ति विधेम स्वाहा। यजु० ४०।१६

हे यज्ञ रूप प्रभो ! आप की यह अग्नि हमें सुपथ पर ले जाने वाली हो अर्थात् अग्नि विज्ञान के द्वारा निर्मित उत्तम

वाहनों में आरूढ़ हो कर हम अपने पथ को सुगम बना लें. जिससे हमें नाना विध उत्तम धन और ऐश्वर्य की प्राप्ति हो हम शिल्प विद्या के द्वारा नाना प्रकार के उद्योगों का विस्तार करें। अग्नि विज्ञान से हमारे जीवन में आने वाली भौतिक आपदाओं और संकटों का हम निवारण कर सकें। हम बहुविध यज्ञ तथा शिल्प विद्या का विस्तार करते हुए सदा आप की आज्ञा का पालन करें और अपने जीवन में निरन्तर सुपथ पर आगे बढ़ते चले जाएँ।

साकल्य के शेष रहने पर निम्न मंत्र से यथेच्छ आहुति दें।

गायत्री मन्त्र –

ओ३म्। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात् स्वाहा। यजु० ३०।२

सकल प्राणियों को जन्म देने हारी सविता रूप धरती माता और सब प्राणियों के लिए वरण करने योग्य वायु तथा गर्भ धारण कराने वाला तथा अत्यन्त पवित्र जो सूर्य है। इन देवताओं को यह यज्ञ धारण करता है अर्थात् यज्ञ त्रिलोको में उत्पादन का सामर्थ्य. वरण योग्य श्रेष्ठता. उसमें पवित्रता भरता रहता है।

हे प्रभो ! आप हमारी बुद्धियों में इस यज्ञों के आयोजन की प्रेरणा दीजिए जो यज्ञ हमारी बुद्धियों में सत्प्रेरणाओं को जागृत करें।

पूर्णाहुति मन्त्र –

ओ३म् सर्वं वै पूर्णङ्‌ स्वाहा ।
ओ३म् सर्वं वै पूर्णङ्‌ स्वाहा ।
ओ३म् सर्वं वै पूर्णङ्‌ स्वाहा ।

हे सर्व शक्तिमान् देव ! निश्चय से आप पूर्ण हो । आप इस सकल सृष्टि में सर्वत्र पूर्ण अर्थात् भरे हुए हो । इस यज्ञ के द्वारा हमारी कामनाओं को पूर्ण कीजिए. पूर्ण कीजिए पूर्ण कीजिए ।

यज्ञ महत्त्व –

"जैसे ईश्वर ने सत्य भाषणादि धर्म व्यवहार करने की आज्ञा दी है मिथ्या भाषणादि की नहीं. जो इस आज्ञा से उल्टा काम करता है वह अत्यन्त पापी होता है और ईश्वर की न्याय व्यवस्था से उसको क्लेश भी होता है । वैसे ही ईश्वर ने मनुष्यों को 'यज्ञ' करने की आज्ञा दी है उस को जो नहीं करता वह भी पापी होके दुख का भागी होता है ।"

X X X

"इसलिए आर्यवर शिरोमणि . महाशय ऋषि. महर्षि राजे. महाराजे लोग बहुत-सा होम करते और कराते थे । जब तक होम करने का प्रचार रहा तब तक आर्यावर्त देश रोगों से रहित और सुखों से पूरित था । अब भी प्रचार हो तो वैसा ही हो जाय ।"

– महर्षि दयानन्द सरस्वती

त्वमेव माता च पिता त्वमेव. त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव.
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव. त्वमेव सर्वं मम देव देव ।

नमस्ते सते ते जगत्कारणाय. नमस्ते चिते सर्व लोकाश्रयाय.
नमोऽद्वैत तत्त्वाय मुक्ति प्रदाय. नमो ब्रह्मणे व्यापिने शाश्वताय।

त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरेण्यं. त्वमेकं जगत्पालकं स्व प्रकाशम्.
त्वमेकं जगत्कर्तृ. पातृ प्रहर्तृ. त्वमेकं परं निश्चलं निर्विकल्पम् ।

भयानां भयं भीषणं भीषणानां. गतिः प्राणिनां पावनं पावनानाम.
महोच्चैः पदानां नियन्तृ त्वमेकं. परेषां परं रक्षण रक्षणानाम् ।

वयं त्वां स्मरामो वयं त्वां भजामो. वयं त्वां जगत्साक्षिरूपं नमामः.
सदेकं निधानं निरालम्बमीशं. भवाम्भोधि पोत शरण्यं व्रजामः।

विदुर्यन्नचित्तेन्द्रियाणीन्द्रियेशं. विजानाति यस्तानि नित्य नियन्ता.
जगत्साक्षिणं व्यापकं विश्ववन्द्यं. चिदानन्दरूपं तमीशं प्रपद्ये ।

अणोरप्यणीयान् महद्भ्यो महीयान्. रवीन्दुग्रहैर्यो भगोलादि कर्ता.
य ईशो हि सृष्ट्यादिमध्यान्त संस्थं. श्चिदानन्द रूपं तमीशं प्रपद्ये.

यतो जायते विश्वमेतत् समस्तं स्थितं यत्र यस्मिन् लयं याति काले.
अनादि विभुं चादिमध्यान्त प्राप्तं. चिदानन्द रूपं तमीशं प्रपद्ये ।

वशे यस्य विश्वं समस्तं सदास्ते. यदा भासतो भाति यद्वै विचित्रम्.
न जानन्ति यं तत्त्वतो योगिनोऽपि. चिदानन्दरूपं तमीशं प्रपद्ये।

– स्व. पं. भीमसेन शर्मा

शुभ कामना –

सब वेद पढ़ें. सुविचार बढ़ें. बल पाय चढ़ें. नित ऊपर को.
अविरुद्ध रहें. ऋजु पन्थ गहें. परिवार कहें. वसुधा भर को।
ध्रुव धर्म धरें. पर दुःख हरें. तन त्याग तरें. भव सागर को.
दिन फेर पिता. वर दे सविता. हम आर्य करें. जगती भर को।

यज्ञ-महिमा

यज्ञरूप प्रभो! हमारे भाव उज्ज्वल कीजिए.
छोड़ देवें छल-कपट को. मानसिक बल दीजिए।
वेद की गाएँ ऋचाएँ. सत्य को धारण करें.
हर्ष में हों मग्न सारे. शोकसागर से तरें।
अश्वमेधादिक रचाएँ. यज्ञ पर-उपकार को.
धर्म-मर्यादा चलाकर. लाभ दें संसार को।
नित्य श्रद्धा-भक्ति से. यज्ञादि हम करते रहें.
रोग-पीड़ित विश्व के. सन्ताप सब हरते रहें।
भावना मिट जाए मन से. पाप अत्याचार की.
कामनाएँ पूर्ण होवें. यज्ञ से नर-नार की।
लाभकारी हो हवन. हर जीवधारी के लिए.
वायु जल सर्वत्र हो. शुभ गन्ध को धारण किए।
स्वार्थ-भाव मिटे हमारा. प्रेम-पथ विस्तार हो.
'इदन्न मम' का सार्थक. प्रत्येक में व्यवहार हो।
हाथ जोड़ झुकाय मस्तक. वन्दना हम कर रहे.
नाथ करुणा रूप करुणा. आपकी सब पर रहे।

यजमान के प्रति आशीर्वाद –

पहले एक व्यक्ति बोले. पीछे सब दोहराएँ और अन्त में पुष्प या अक्षत की वर्षा करें।

भगवान इस परिवार को. सुख का सदा वरदान दो
ज्ञान की गंगा बहा कर. शुद्ध वैदिक ज्ञान दो.
नीरोग होकर सब जिएँ. शत वर्ष आयुष्मान् हों.
धन-धन्य से पूरित सदा. यश-युक्त कीर्तिमान हों.
पुत्र-पौत्रादिक सभी बलवान हों. श्रीमान् हों.
विद्वान् हों. मतिमान् हों. धर्मात्मा धीमान् हों।

सर्वे भवन्तुः सुखिन , सर्वे सन्तु निरामयाः
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु. मा कश्चिद् दुःख भाग् भवेत्।

ओ३म् असतो मा सद् गमय
तमसो मा ज्योति र्गमय
मृत्योर्मा अमृतं गमय ।

शान्तिपाठ

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षङ् शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वङ् शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि।

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

हे दयामय हम सबों को शुद्धताई दीजिए.
दूर करके हर बुराई को भलाई दीजिए।
तेरी कृपा उत्तम अनुग्रह हम पै हो परमात्मा.
हों सभासद् इस सभा के सबके सब धर्मात्मा।
हो उजाला सबके मन में ज्ञान के विस्तार से.
और अँधेरा दूर सारा हो अविद्या-नाश से।
खोटे कर्मों से बचें हम तेरे गुण गावें सभी.
छूट जावें दुःख सारे. सुख सदा पावें सभी।
सारी विद्याओं को सीखें ज्ञान से भरपूर हों.
शुभ-कर्म में संलग्न होवें. दुष्ट गुण सब दूर हों।
शुभ हवन से हो सुगंधित. अपना भारतवर्ष देश.
वायु जल सुखदायी होवे. जाएँ मिट संकट अनेक।
वेद के विज्ञान में. संलग्न सब पुरुषार्थी.
और आपस में हो प्रीति. हम बनें परमार्थी।
लालची. कामी व क्रोधी. कोई भी हम में न हो.
दुष्ट व्यसनों से बचें हम. छोड़ देवें मोह को।
अच्छी संगत में रहें सब वेद के पथ पर चलें.
तेरे ही होवें उपासक दुष्ट कर्मों से बचें।
कीजिए सबके हृदय को शुद्ध अपने ज्ञान से.
मान भक्तों में बढ़ाकर सबका भक्ति-दान से।

भजन सं० २

ओ३म् है जीवन हमारा. ओ३म् प्राणाधार है ।
ओ३म् है कर्ता विधाता ओ३म् पालनहार है ।
ओ३म् है दुःख का विनाशक. ओ३म् सर्वानन्द है ।
ओ३म् है बल तेजधारी. ओ३म् करुणाकंद है ।
ओ३म् सबका पूज्य है. हम ओ३म् का पूजन करें ।
ओ३म् ही के ध्यान से. हम शुद्ध अपना मन करें ।
ओ३म् के गुरु मन्त्र जपने से रहेगा शुद्ध मन ।
बुद्धि दिन-प्रतिदिन बढेगी. धर्म में होगी लगन ।

भजन सं० ३

आज मिल सव गीत गाओ उस प्रभु कें धन्यवाद.
जिसका यश नित गाते हैं गन्धर्व गुणीजन धन्यवाद ।
मन्दिरों में कन्दरों में पर्वतों के शीश पर.
देते हैं दिन रात सौ-सौ बार मुनिवर धन्यवाद ।
करते हैं जंगल में मंगल पक्षिगण हर डाल पर.
पाते हैं आनन्द. मिल गाते हैं स्वर भर धन्यवाद ।
कूप में. तालाब में सिंधु की गहरी धार में.
प्रेम-रस में तृप्त हो करते हैं जलचर धन्यवाद ।
शादियों सत्संग में व. यज्ञ और उत्सव के बाद.
मीठे स्वर से चाहिए मिल नारी-नर सब धन्यवाद ।

भजन सं० ४

ओ३म् अनेक बार बोल प्रेम कें प्रयोगी।
है यही अनादि नाद. निर्विकल्प निर्विवाद.
भूलते न पूज्यपाद. वीतराग योगी । ओ३म्०
वेद को प्रमाण मान. अर्थ योजना बखान.
गा रहे गुणी सुजान. साधु-स्वर्ग-भोगी । ओ३म्०
ध्यान में धरें विरक्त. भाव से भजें सुभक्त.
त्यागते अघी अशक्त. पोच पाप रोगी । ओ३म्०
शंकरादि नित्य नाम. जो जपे बिसार काम.
तो बने विवेक-धाम. मुक्ति क्यों न होगी । ओ३म्०

भजन सं० ५

हुआ ध्यान में ईश्वर के जो मगन. उसे कोई भी क्लेश लगा न रहा.
जब ज्ञान की गंगा में नहाया. तो मन में मैल जरा न रहा।
परमात्मा को जब आत्मा ने. लिया देख ज्ञान की आंखों से.
सद् ज्ञान हुआ मन में उसके. फिर कोई भी भेद छिपा न रहा।
उद्यम ही इस दुनिया में. सब कामना पूरी करता है.
मन चाहा फल उसने पाया. जो आलसी बनके पड़ा न रहा।
दुःखदायी हैं सब शत्रु हैं. यह विषय हैं जितने दुनिया के.
वही पार हुआ भवसागर से. जो जाल में इनके फँसा न रहा।
यहाँ वेद-विरोधि मत जब फैले. पत्थर की पूजा आरंभ हुई.
जब वेद की विद्या लुप्त हुई फिर ज्ञान का पाँव जमा न रहा।

यहाँ बडे-बडे महाराज हुए. बलवान हुए. विद्वान हुए.
पर मौत के पंजे से अब तक इस जग में कोई बचा न रहा।

भजन सं० ६

हे प्रेममय प्रभो तुम्हीं सबके आधार हो.
तुमको परम पिता प्रणाम बार-बार हो।

ऐसी कृपा करो कि हम सब धर्मवीर हों.
वैदिक पवित्र धर्म का जग में प्रचार हो।

सन्देश देश-देश में वेदों का दें सुना.
समभाव और प्रेम का सब में प्रसार हो।

असहाय के सहाय हों उपकार हम करें.
अभिमान से बचें. हृदय निर्भय उदार हो।

फूले फले संसार में यह रम्य वाटिका.
कर्तव्य का हमें सदा अपने विचार हो।

स्वाधीनता के मंत्र का जप हम सदा करें.
सेवा में मातृभूमि के तन-मन निसार हो।

भजन सं० ७

तेरे दर को छोड़कर किस दर जाऊँ मैं.
सुनता मेरी कौन है किसे सुनाऊँ मैं।

जब से याद भुलाई तेरी लाखों कष्ट उठाए हैं.
क्या जानूं इस जीवन अंदर कितने पाप कमाए हैं।

हूँ शरमिन्दा आपसे. क्या बतलाऊँ मैं । तेरे०
मेरे पाप कर्म ही तुझसे प्रीति न करने देते हैं.
कभी जो चाहूँ मिलूं आप से रोक मुझे यह लेते हैं.
कैसे स्वामी आपके दर्शन पाऊँ मैं । तेरे०
है तू नाथ ! वरों का दाता. तुझसे सब वर पाते हैं.
ऋषि. मुनि और योगी सारे तेरे ही गुण गाते हैं.
छींटा दे दो ज्ञान का. होश में आऊँ मैं । तेरे०
जो बीती सो बीती लेकिन बाकी उम्र सँभालूं मैं.
प्रेमपाश में बँधा आपके गीत प्रेम के गालूँ मैं.
जीवन प्यारे 'देश' का सफल बनाऊँ मैं । तेरे०

भजन सं० ८

हे दयामय ! आपका हमको सदा आधार हो.
आपके भक्तों से ही भरपूर यह परिवार हो ।
छोड़ देवें काम को और क्रोध को मद. मोह को.
शुद्ध औ निर्मल हमारा सर्वदा आचार हो ।
प्रेम से मिल मिल के सारे गीत गावें आपके.
दिल में बहता आपका ही प्रेम पारावार हो ।
जय पिता जय-जय पिता. हम जय तुम्हारी गा रहे.
रात-दिन घर में हमारे आपकी जयकार हो ।
पास अपने हो न धन तो उसकी कुछ चिन्ता नहीं.
आपकी भक्ति से ही धनवान् यह परिवार हो ।

भजन सं० ९

प्रेमी भरकर प्रेम में. ईश्वर के गुण गाया कर.
मन-मन्दिर में गाफिला. झाडू रोज लगाया कर।

सोने में तो रात गुजारी. दिन भर करता पाप रहा.
इसी तरह बरबाद तू बंदे. करता अपने आप रहा।
प्रात समय उठ ध्यान से. सत्संग में तू जाया कर। प्रेमी०

नर तन के चोले का पाना बच्चों का कोई खेल नहीं.
जन्म-जन्म के शुभ कर्मों का होता जब तक मेल नहीं.
नर तन पाने के लिए. उत्तम कर्म कमाया कर। प्रेमी०

पास तेरे है दुखिया कोई. तूने मौज उडाई क्या ?
भूखा प्यासा पड़ा पडोसी. तूने रोटी खाई क्या ?
पहले सबसे पूछकर. फिर तू भोजन खाया कर। प्रेमी०

देख दया उस परमेश्वर की वेदों का जिसने ज्ञान दिया.
'देश' तू मन में सोच जरा तो कितना है कल्याण किया?
सब कामों को छोडकर. ईश नाम तू ध्याया कर। प्रेमी०

भजन सं० १०

अब सौंप दिया इस जीवन का सब भार तुम्हारे हाथों में.
है जीत तुम्हारे हाथों में. है हार तुम्हारे हाथों में।

मेरा निश्चय है एक यही इक बार तुम्हें पा जाऊँ मैं.
अर्पण कर दूं जगती भर का सब प्यार तुम्हारे हाथों में।

या तो मैं जग से दूर रहूँ. और जग में रहूँ तो ऐसे रहूँ.
इस पार तुम्हारे हाथों में. उस पार तुम्हारे हाथों में।

यदि मानव का मुझे जन्म मिले. तव चरणों का ही भक्त रहूँ.
मुझ पूजक की इक-इक रग का. हो तार तुम्हारे हाथों में।

जब-जब संसार का बन्दी बन. दरबार तेरे में आऊँ मैं.
हो मेरे पापों का निर्णय. सरकार तुम्हारे हाथों में।

मुझमें तुझमें है भेद यही. मैं नर हूँ तुम नारायण हो.
मैं हूँ संसार के हाथों में. संसार तुम्हारे हाथों में।

भजन सं० ११

शरण प्रभु की आवो रे. यही समय है प्यारे।
छल कपट और झूठ को त्यागो. सत्य में चित्त लगाओ रे।
उदय हुआ ओ३म नाम का भान. आओ दर्शन पाओ रे।
पान करो इस अमृत फल को. उत्तम पदवी पाओ रे।
प्रभु की भक्ति बिन नहीं मुक्ति. दृढ विश्वास जमाओ रे।
मानुष जन्म अमोलक है यह. वृथा न इसको गँवाओ रे।
कर लो नाम प्रभु का सिमरन. अन्त को न पछताओ रे।
धन्य दया जो सबको पाले. मत उसको बिसराओ रे।
छोटे बडे सब मिलकर खुशी से. गुण ईश्वर के गाओ रे।

जय जगदीश हरे. जय जगदीश हरे.
भक्तजनन के संकट. क्षण में दूर करे ।

जो ध्यावे फल पावे. दुःख विनशे मन का.
सुख-सम्पत्ति घर आवे. कष्ट मिटे तन का ।

मात-पिता तुम मेरे. शरण गहूँ किसकी.
तुम बिन और न दूजा. आस करू जिसकी ।

तुम पूरण परमात्मा. तुम अन्तर्यामी.
पारब्रह्म परमेश्वर. तुम सबके स्वामी ।

तुम करुणा के सागर. तुम पालन कर्ता.
मैं सेवक तुम स्वामी. कृपा करो भर्ता ।

तुम हो एक अगोचर. सबके प्राणपति.
किस विध मिलूं दयामय. मुझ को दो सुमति ।

दीनबन्धु दुःखहर्ता. तुम रक्षक मेरे.
करुणा-हस्त बढ़ाओ. द्वार खड़ा तेरे ।

विषय-विकार मिटाओ. पाप हरो देवा.
'श्रद्धा' भक्ति बढ़ाओ. सन्तन की सेवा ।

जयति ओ३म्-ध्वज व्योम विहारी.
विश्व-प्रेम प्रतिमा अति प्यारी ।

सत्य-सुधा बरसाने वाला. स्नेह-लता सरसाने वाला.
साम्य-सुमन विकसाने वाला. विश्व विमोहक भव भय हारी । जय०

इसके नीचे बढ़ें अभय मन. सत्पथ पर सब धर्म धुरी जन.
वैदिक रवि का हो शुभ उदयन. आलोकित होवें दिशि सारी । जय०

इससे सारे क्लेश शमन हों. दुर्मति. दानव. द्वेष. दमन हों.
अति उज्ज्वल अति पावन मन हों. प्रेम तरंग बहे सुखकारी । जय०

इसी ध्वजा के नीचे आकर. ऊँच-नीच का भेद भुलाकर.
मिले विश्व मुद-मंगल गाकर. पन्थाई पाखण्ड बिसारी । जय०

इस ध्वज को लेकर हम कर में. भर दें वेद-ज्ञान घर-घर में.
सुभग शान्ति फैले जग भर में. मिटे अविद्या की अँधियारी । जय०

विश्व प्रेम का पाठ पढ़ावें. सत्य अहिंसा को अपनावें.
जग में जीवन ज्योति जगावें. त्याग पूर्ण हो वृत्ति हमारी । जय०

आर्य जाति का सुयश अक्षय हो. आर्य-ध्वजा की अविचल जय हो.
आर्य जनों का ध्रुव निश्चय हो. आर्य बनावें वसुधा सारी ।

जयति ओ३म्-ध्वज व्योम बिहारी.
विश्व-प्रेम प्रतिमा अति प्यारी ।

सुन्दर सृष्टि को मत बिगाड़िए ।

जो सृष्टिकर्ता परमेश्वर के अस्तित्व को श्रद्धापूर्वक स्वीकार कर वेदोक्त आदेशों का पालन करता है वह आस्तिक कहाता है ।

जो वेदोक्त आदेशों को न मानकर अपना काल्पनिक भगवान बना लेता है उसकी पूजा करता है और परमात्मा के गुण, कर्म और स्वभाव की उपेक्षा कर मनुष्य के बीच जातीयवाद और सम्प्रदायवाद को बढ़ाता है वह निस्संदेह नास्तिक है ।

जो मनुष्य समाज को हिन्दू, मुसलमान, ईसाई आदि सम्प्रदायों में विभक्त करते हैं और इसी आधार पर राष्ट्र निर्माण की कल्पना करते हैं वे परमात्मा का नाम लेते हुए भी परमात्मा के घोर विरोधी तथा वैदिक मानवीय संस्कृति के घोर दुश्मन हैं ।

परमात्मा की पूजा या उसे स्वीकार करने का मुख्य प्रयोजन उस महान् शक्ति के गुण, कर्म, स्वभाव को स्व सामर्थ्य के अनुसार धारण करना है ।

क्या प्रभु, मनुष्य को हिन्दू, मुसलमान और ईसाई आदि के आधार पर फल देते हैं ? कदापि नहीं ! परमात्मा की दृष्टि में हिन्दू मुसलमान और ईसाई का कोई अन्तर नहीं है । वे तो इन क्षुद्रताओं से ऊपर पक्षपात रहित सभी को उनके कर्मों का न्यायपूर्वक शुभ, अशुभ फल देते हैं ।

इससे स्पष्ट है कि – ये जातीयवादी और सम्प्रदायवादी परमात्मा के भक्त नहीं दुश्मन हैं । यही कारण है कि – ये सम्प्रदायवादी अपने-अपने स्वार्थों के वशीभूत सदा आपस में लड़ते हैं और घोर कष्ट व दुःख भोगते हैं ।

प्रभु भक्त प्राणी मात्र को मित्र की दृष्टि से देखता है । जो हिन्दू को अपना और मुसलमानों को पराए या मुसलमानों को अपना और हिंदुओं को काफिर या पराया मानता है वह न तो आस्तिक है और न उसकी किसी साम्प्रदायिक प्रार्थना को प्रभु स्वीकार करते हैं ।

वेद की दृष्टि में हम सब एक ही परमात्मा के पुत्र हैं और आपस में भाई-भाई हैं । आधुनिक युग के सर्वश्रेष्ठ महापुरुष दिव्य द्रष्टा महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इन्हीं पवित्र उद्देशों को लेकर आर्य समाज नामक एक पवित्र संस्था की स्थापना की । उसके सुनहरे दस नियमों में उन्होंने स्पष्ट घोषणा की कि – संसार का उपकार करना

इस समाज का मुख्य उद्देश्य है । इस प्रकार आर्य समाज जाति. देश.
काल से ऊपर एक सार्वभौम मानव सेवी संस्था है ।

जो क्षुद्र बुद्धि आर्य समाज का विशेष सम्बन्ध किसी सम्प्रदाय विशेष
से जोड़ते हैं वे क्षुद्राशयी जन वेद विरोधी. नास्तिक हैं ।

आर्यों का कर्तव्य है कि – वे सर्वथा पक्षपात रहित न्यायाचरण
के मार्ग पर चलते हुए मानव मात्र की उन्नति के लिए निष्काम भाव
से प्रयत्नशील हो कर अपने स्वरूप को वेदानुकूल पवित्र बनाए रक्खें ।
सभी सम्प्रदाय और जातीयवादियों को समझा बुझा कर उन्हें शुद्ध
मानवीय वेद धर्म के अनुसार चलने की प्रेरणा देनी चाहिए ।

सम्प्रदायवादी और जातीयवादी परमात्मा की धरती का और
परमात्मा का सबसे बडा दुश्मन है । अत: मनुष्य मात्र का कर्तव्य है
कि – वे इन सम्प्रदाय जाति वर्ग आदि के भेद से ऊपर शुद्ध मानवीय
दृष्टि से सबसे आत्मीयता का व्यवहार करें । परस्पर घृणा. द्वेष फैलाना
परमात्मा की इस सुन्दर सृष्टि को बिगाडना है ।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने स्थान-स्थान पर आर्य चक्रवर्ती
राज्य की कामना की है । इसका अभिप्राय कदापि यह नहीं है कि –
आर्य कोई जाति है । जो संसार में अपना साम्राज्य स्थापित करना
चाहती है । हर श्रेष्ठ गुण. कर्म. स्वभाव वाला व्यक्ति आर्य है । जो
गुण. कर्म स्वभाव से श्रेष्ठ नहीं है और अपने को आर्य कहता है वह
जन्मगत जाति के आधार पर अपने को ब्राह्मण बताने वाले का भी बडा
भाई है और नकली आर्य है ।

आर्य चक्रवर्ती राज्य की स्थापना का अभिप्राय है कि – विश्व
में एक ही विश्व संस्कार की स्थापना करना – हर श्रेष्ठ गुण. कर्म.
स्वभाव वाले श्रेष्ठ पुरुष की यह कामना करनी चाहिए जिससे विश्व
मानव संकीर्ण राष्ट्रवाद. जातीयवाद और सम्प्रदाय वाद से ऊपर उठें ।
एक देश दूसरे देश का शोषण न कर सके । सारी धरती एक परिवार
बन जाए जिससे सारे भेद भाव खत्म हों । प्रत्येक को न्याय प्राप्त हो ।

सृष्टि के आदि से स्वार्थी जनों ने राष्ट्रवाद. सम्प्रदायवाद
और जातीयवाद के आधार पर धरती को खून से रंगा है । विश्व में
अशान्ति का मूल कारण ये ही क्षुद्रताएं हैं अत: प्रत्येक प्रभु भक्त को
धरती पर एक अच्छे वातावरण को फैलाने का प्रयत्न करना चाहिए ।

—०००—

ओ३म् सं समिद युवसे. वृषन्यग्ने विश्वान्यर्यं आ।
इळस्पदे समिध्यसे. स नो वसून्या भर ।
हे ईश सब सामर्थ्य तुम में. शक्ति-यश का दान दो.
सृष्टि के कर्ता तुम्हीं हो. अग्नि-विद्या ज्ञान दो.
वेद भी गुण-गान गाते. सत्य का अभिमान दो.
धन-धान्य से भरपूर हों सब. स्नेह का वरदान दो ।

सं गच्छध्वं सं वदध्वं. सं वो मनांसि जानताम् ।
देवा भागं यथापूर्वे. सं जानाना उपासते ।
न्याय के पथ पर चलें सब. स्नेहमय भाषण करें.
एक हों मानस सभी के. सत्य. अनुशासन धरें.
दिव्य गुण से युक्त हों सब. धर्म के पालक. व्रती.
हम बनें ऐसे उपासक. ज्यों बनें ऋषिगण यती ।

समानो मन्त्रः समितिः समानी. समानं मनः सह चित्तमेषाम् ।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि ।
हों विचार समान सब के. रीति नीति समान हों.
सब विरोध मिटें हृदय के. चित्त एक समान हों.
आशीष प्रभु का पा सकें सब. सत्य धर्म वितान हो.
व्यवहार सब का धर्म पूर्वक, एक भक्ति विधान हो ।

समानी व आकूतिः. समानी हृदयानि वः ।
समानमस्तु वो मनो. यथा वः सुसहासति ।
एक हों निश्चय सभी के. औ हृदय भी एक हों.
शुभ कामनाएँ एक हों. संकल्प सब के एक हों.
एक हो श्रद्धा सभी की. और मेधा एक हो.
सुख बढे सब विध सभी का. धर्म बुद्धि विवेक हो ।

ऋग्वेद का अन्तिम सूक्त —

आर्यसमाज के नियम

१ सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं. उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।

२ ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप. निराकार. सर्वशक्तिमान्. न्यायकारी. दयालु. अजन्मा. अनन्त. निर्विकार. अनादि. अनुपम. सर्वाधार. सर्वेश्वर. सर्वव्यापक. सर्वान्तर्यामी. अजर. अमर. अभय. नित्य. पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३ वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

४ सत्य के ग्रहण करनें और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

५ सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करनें चाहिएँ।

६ संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७ सब से प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए।

८ अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

९ प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिए। किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

१० सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

सत्संग सरोवर के प्रणेता पं. वेदभूषण
श्रद्धेय महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती के साथ

देश - विदेश में अत्यन्त लोकप्रिय

वैदिक सान्ध्य गीत

के बारे में स्व. महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती की

शुभ सम्मति

अहह ! इतना प्यारा और भक्ति रस से परिपूर्ण पद्यानुवाद मैंने दूसरा नहीं देखा –

मेरे प्यारे प. वेदभूषण जी तथा मेरी प्यारी बेटी डॉ. सुनीति एम्. ए. पी-एच्. डी. दोनों भाई - बहनों ने इसे प्रकाशित कर आर्य जगत् के एक अभाव को पूरा किया है। वेद मंत्रों का पद्यानुवाद पढ़कर हृदय गद् गद् हो जाता है।

महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती

वैदिक सान्ध्य गीत आर्य जगत् की गीता है। प्रत्येक अवसर पर भेंट देने योग्य।

मूल्य तीन रुपए मात्र

परम योगी महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती